UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182450

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—23—4-4-69—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H82 S77A Accession No. P.G. H257

Author श्रीवास्तव, कृष्णकिशोर.

Title आदमी के टुकडे. 1962.

This book should be returned on or before the date last marked below.

आदमी के टुकड़े

(तीन अंकों में एक मनोवैज्ञानिक मंचीय कहानी)

卐

कृष्ण किशोर श्रीवास्तव

卐

प्रकाशक

रामनारायणलाल बेनीप्रसाद

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

इलाहाबाद—२

प्रकाशक :

रामनारायणलाल बेनीप्रसाद
इलाहाबाद–२

आवरण-पृष्ठ सज्जा : भाऊ समर्थ

मूल्य : १ रुपया ५० नये पैसे

मुद्रक :
वैनगार्ड प्रेस,
इलाहाबाद–२

श्रद्धेय 'बच्चन' जी को

अपनी बात

नाट्यशास्त्र में नाटक को पाँचवाँ वेद माना गया है। नाट्यवेद की रचना के संबंध में जो कथा है उसमें कहा गया है कि त्रेतायुग में मानव-जीवन की असमताओं से परास्त होकर इन्द्र समस्त देवताओं के साथ ब्रह्मा के पास गये और उन्होंने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे कोई ऐसा खेल रचें जो देखने और सुनने योग्य हो तथा जिससे सभी वर्णों के लोग आनन्द ग्रहण कर सकें। इन्द्र की प्रार्थना स्वीकार कर ब्रह्मा ने ऋग्वेद से कथा, सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस लेकर, वेदों और उपवेदों के समान एक नया वेद, नाट्यवेद, रचा। इस वेद में इतिहास को भी स्थान मिला। इतिहास का समावेश हो जाने के कारण यह नाट्यवेद अन्य सभी वेदों से भिन्न धरातल पर आ गया। इस नाट्यवेद की रचना के पूर्व इतिहास और वेद सदैव पृथक भावभूमियों पर ही रहते थे। नाट्यवेद की एक विशेषता और थी। अन्य वेदों के पठन-पाठन में जो 'वर्णों' के नाम पर संकीर्णता प्रचलित थी, यह इससे मुक्त था। नाट्यवेद का आधार इतिहास की सत्यता पर था और विस्तार सम्पूर्ण मानवता की विशालता में।

आज अपनी तार्किक बुद्धि को लेकर हम नाट्यवेद की उत्पत्ति के लिए उक्त कथा को नहीं अपना सकते; पर इससे यह बात तो स्पष्ट हो जाती है कि नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटक, इतिहास की पृष्ठभूमि पर जन्मता है तथा कथा, संगीत, अभिनय और रस के तत्वों से अनुप्राणित होता है।

जीवन और साहित्य के बदलते मानदंडों के कारण नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप परिवर्तित होता जा रहा है। आधुनिक नाटककार संगीत को गौण मानता है क्योंकि संगीत वातावरण के निर्माण में ही सहायक हो सकता है। कला को रसमय मानकर भी नाटककार रस विशेष के लिए अपने दृष्टिकोण को नहीं बदलना चाहता; पर जहाँ तक मानव इतिहास की कथा और अभिनय का प्रश्न है वहाँ आज का सजग नाटककार अधिक सचेत और

ईमानदार है। ये दोनों तत्व उसको नाट्य-कला के प्राण हैं। यह दृष्टिकोण वास्तव में नाटक के लिए सबसे स्वस्थ और उपयुक्त भी है। प्राचीन भारत के नाट्यशास्त्रियों ने जहाँ भी नाटक की विस्तृत व्याख्या की है इन्ही दोनों तत्वों पर विशेष बल दिया है। उन्होंने नाटक को मानव की किसी भी अवस्था का "अनुकरण" कहा है और उनके इस कथन में मानव-जीवन के इतिहास के साथ अभिनय का तत्व भी उभर कर आया है। नाटक की इस व्याख्या से पाश्चात्य विद्वान भी सहमत हैं।

परिस्थितियों के अनुसार नाटकोचित अनुकरण की चार अवस्थाएँ हो सकती हैं—(१) जो हो चुकी हैं (पौराणिक अथवा ऐतिहासिक), (२) जो हो रही हैं (यथार्थ), (३) जो हो सकती हैं (संभाव्य) और (४) जो, होना चाहिए (आदर्श अथवा काल्पनिक)। इन चारों अवस्थाओं के अन्तर्गत सम्पूर्ण नाट्य-साहित्य बाँधा जा सकता है।

इन अवस्थाओं को आधार मानकर हम किसी भी भाषा के नाट्य-साहित्य की प्रवृत्तियों का अनुमान कर सकते हैं। हिन्दी के नाट्य-साहित्य को इस कसौटी पर कसते ही कुछ विलक्षण सत्य हमारे सामने आते हैं। यह देखकर हमें आश्चर्य होता है कि नाट्यशास्त्र की क्षण-क्षण दुहाई देने वाले अनेक नाटककार (जिनमें आधुनिक और जीवित भी सम्मिलित हैं) अपनी नैतिक दुर्बलताओं के कारण केवल दो ही अवस्थाओं में समाप्त हो रहे हैं। 'जो हो चुका है और' जो होना चाहिए', इन्हीं दो अवस्थाओं की पृष्ठभूमियों पर सर्वाधिक नाटक रचे जा रहे हैं।

साहित्य का सत्य इतिहास के सत्य से भिन्न होता है, इसे अवलम्ब मानकर "जो हो चुका है" इसके अन्तर्गत आनेवाले न जाने कितने घटिया पौराणिक अथवा ऐतिहासिक नाटक आये दिन हिन्दी में प्रकाशित हो रहे हैं। ऐसे नाटकों की आड़ में ख्याति प्राप्त कर अपनी नपुंसकता छिपाने का जो अभियान चल रहा है उससे हिन्दी का नाट्य-साहित्य सम्पन्न नहीं होगा। कुछ पुस्तकालयों अथवा पाठ्य-क्रमों में स्थान पाने के बावजूद भी ये अर्थहीन-दृष्टिहीन नाटक, हिन्दी रंगमंच को कोई गति नहीं दे पायेंगे।

जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं पौराणिक अथवा ऐतिहासिक नाटकों को कला की दृष्टि से निम्नकोटि में ही रखता हूँ। नाटकों का सबसे कठिन अंश होता है, पात्रों अथवा चरित्रों का निर्माण—उनका मांसल रूप—जो नाटककार की सबसे बड़ी कसौटी है। ख्यातिप्राप्त ऐतिहासिक अथवा पौराणिक पात्र लेकर नाटककार इस कठिनतम अंश से मुक्त हो जाता है और मेरी दृष्टि में वह कला के क्षेत्र में औसत नाटककार की तुलना में बौना हो जाता है। और यदि अपनी दुर्बलता के कारण वह उन चरित्रों को 'नाटकीय' भी न बना पाये तो उसके नाटक को कोई महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

आदर्शवाद के नाम पर नाटककार चौथी अवस्था—जो होना चाहिए—का भी खूब आश्रय ले रहे हैं। इसका भी कारण है। यहाँ जीवन और जगत को छोड़कर उड़ने का पर्याप्त अवसर मिलता है तथा उन रसिकों से मुक्ति मिल जाती है जो नाटक को जीवन से हटाकर नहीं देखना चाहते। यह परखा हुआ सत्य है कि ये थोथे और जीवन की यथार्थता से हटे नाटक उथले वातावरण में क्षणिक कोलाहल के साथ समाप्त हो जाते हैं।

प्रयोगों के नाम पर काल्पनिक नाटकों की भी बाढ़ आ रही है। पर नाटक के क्षेत्र में वे प्रयोग, जो नाटक के मूलधर्म की उपेक्षा करते हैं, कोई महत्व नहीं रखते। ये प्रयोग कुछ 'धुरीहीन' नाटककारों की दुर्बलताएं चाहे छिपा ले पर स्वयं को स्थायी नाट्य-साहित्य की श्रेणी में नहीं ला पायेंगे।

नाटक का वास्तविक निखार शेष दो अवस्थाओं में ही संभव है—जो हो रहा है—और जो हो सकता है। इन्हीं अवस्थाओं में नाट्यशास्त्र की आत्मा की शांति है और आधुनिकता की पिपासा की तुष्टि भी। इन्हीं अवस्थाओं के चित्रण में मानव का सच्चा चित्र संभव है। इन्हीं के विश्लेषण में उस राष्ट्रीय चिन्ता का हल भी है जो आज भावनात्मक एकता की संज्ञा पा गयी है। वास्तव में आज हमें उस नये नाटक की अपेक्षा है जो जीवन के निकट हो—जीवन का ही हो। पर हर दशा में हमें यह ध्यान रखना ही होगा कि वह पूरी तरह नाटक हो, रंगमंच जिसकी कसौटी है।

और यह "आदमी के टुकड़े" मेरी अपनी इस चुनौती का, अपना ही उत्तर है।

× × × ×

इस नाटक का बीज मेरे एक ध्वनि-नाटक 'कच्चे धागे' में है जो मैंने '५४ में आकाशवाणी के लिए लिखा था। उसके बाद उस कथानक पर समय की पर्त जमी, चरित्रों पर परिस्थितियों का आघात हुआ, रंगमंच-आंदोलन की आवश्यकताओं ने मुझे झकझोरा और फल हुआ यह 'आदमी के टुकड़े'।

प्रयाग रंगमंच के कर्णधार भाई (डॉ०) सत्यव्रत सिन्हा का स्नेह और उनके ठोस सुझाव लेखन में मेरे सहायक बने और प्रसिद्ध प्रकाशन संस्था रामनारायणलाल बेनीप्रसाद ने इसके प्रकाशन की बात अपने अपनत्व से पूरी की। मित्रों का यह सामीप्य मेरी स्थायी निधि है। आभार से उसका व्यापार क्या करूँ!

जबलपुर

रक्षाबंधन, '६२

कृष्णकिशोर श्रीवास्तव

* पात्र-परिचय

अरूपबिहारी	एक वकील। आयु लगभग ३०-३२ वर्ष।
जगभूषण	एक व्यापारी। आयु अरूपबिहारी के आसपास।
लाला धरमदास	एक ठेकेदार। आयु लगभग ४५ वर्ष।
मुंशी खैरातीलाल	अरूपबिहारी के मुंशी। आयु लगभग ५० वर्ष।
माधवी	अरूपबिहारी की बहन। आयु लगभग २० वर्ष।
गाथा	माधवी की सहपाठिका। आयु माधवी से कुछ अधिक।

प्रथम अंक

[पर्दा उठने के पूर्व नारी स्वर मे मीरा का भजन सुनाई देता है —'म्हारा जनम-मरण को साथी।' भजन की प्रथम पंक्ति दोहराई जाती है और धीरे-धीरे स्वर मन्द होता जाता है। भजन के समाप्त होते-होते पर्दा उठता है।

एडवोकेट अरूप बिहारी का ऑफ़िस। ऑफ़िस के कमरे के दोनों पिछले कोने कुछ गोलाकर है। पिछली दीवाल में दोनों ओर जहाँ से गोलाई शुरू होती है—एक-एक खिड़की है। प्रेक्षालय की ओर दोनों ओर एक-एक दरवाज़ा है। दाहिनी ओर के दरवाज़े पर दो सीढ़ियाँ हैं। यह घर के अन्दर ले जाता है और दूसरा दरवाज़ा बाहर की ओर। दाहिनी खिड़की से पीछे का उद्यान झलकता है और माधवीलता झाँकती दिखती है। बाईं खिड़की दूर सड़क की हलचल का चित्र तथा घर की ओर आने-जाने वाले लोगों का पूर्ण परिचय देती है। दाहिनी खिड़की और दरवाज़े के बीच अरूप की ऑफ़िस टेबुल है—मोटे-मोटे ग्रन्थों से लदी। टेबुल के पीछे रिवाल्विंग चेयर है। टेबुल की बाईं ओर एक छोटी टेबुल पर फोन और दाहिनी ओर रिवाल्विंग बुक शेल्फ़! दूसरी ओर दरवाज़े से कुछ हटी एक छोटी टेबुल और है जिस पर एक टाइपराइटर रखा है और पास की कुर्सी पर बैठे मुंशी खैराती लाल कुछ टाइप कर रहे हैं।

दोनों खिड़कियों के बीच दीवाल पर एक बड़ी घड़ी लगी है, जो बिजली से चलती है। समय, ९ बजे सुबह के करीब। घड़ी के नीचे दीवाल से लगी तीन आराम कुर्सियाँ रखी हैं। अरूप की टेबुल के पास एक कुर्सी खाली पड़ी है। मुंशी जी की टेबुल के पास एक कुर्सी पर जगभूषण बैठे हैं। कमरे की खाली दीवालें

किताबों से भरी काँच के पल्लों वाली आलमारियां से छिपी हैं। दरवाजों पर पर्दे पड़े हैं। खिड़कियों के पर्दे सरके हुए हैं जैसे वे अपने पीछे का रहस्य नहीं छिपाना चाहते।]

माधवी : **(नेपथ्य से ऊँचे स्वर मे)** भैया, पूजा हो गई। आप जल्दी से प्रसाद लेने आ जाइए।

अरूप : **(नेपथ्य से)** बस, आ ही रहा हूँ मधु !

[भजन की पंक्ति फिर धीमे-धीमे स्वर में सुनाई देती है, जो कुछ ही क्षणों मे थम जाती है। जगभूषण अपने कान नेपथ्य में लगाए दिखते है—और मुंशी जी की उंगलियां टाइपराइटर पर नाचती दिखती है]

भूषण : **(उठते हुए)** बड़े भक्त मालूम होते है वकील साहब !

मुंशी : **(टाइप करना रोककर—चश्मे में से झाँकते हुए)** नास्तिक नहीं है।

भूषण : ये तो मै भी समझ रहा हूँ। अगर नास्तिक होते तो प्रसाद भी क्यों लेते। आजकल पढ़े-लिखे लोगों मे पूजा-पाठ के प्रति-विरक्ति-सी आ रही है। वकील साहब अपवाद लगते हैं। **(कुछ तेजी से)** और फिर वकीलों मे तो ये चीज़ बहुत ही कम देखी जाती है। **(हँसने का प्रयास करते हुए)** वकालत का काम ही कुछ ऐसा है कि भक्ति की बात सूझना कठिन है। मेरा मतलब है कि उन्हें साथ ही कुछ ऐसे लोगों का मिलता है.....।

मुंशी : **(डिब्बे में से पान निकालकर चबाते हुए)** मैं समझता हूँ कि आप अपने आप को बुरा आदमी नहीं समझते। **(टाइप करना शुरू करते हैं।)**

भूषण : **(कुछ झेंपकर सँभलते हुए)** मुंशी जी, आप तो खुद ही अच्छे वकील हो सकते है।

मुंशी : **(टाइपराइटर रोककर)** मैं आपके इस ख्याल को ग़लत नहीं मानता।

भूषण : यदि वकील साहब नहीं मिले तो आपसे ही सलाह ले लूँगा। मैं हो आपका पहला मुवक्किल बन जाऊँगा। **(घड़ी की ओर देखकर)** मैं साढ़े आठ बजे आया था; आधा घंटा हो रहा है। आखिर मुझे भी तो कुछ और काम है।

मुंशी : यहाँ भी आप काम से ही तो आये हैं। **(शब्दों को चबाते हुए)** और मैं समझता हूँ कि आपका काम ज़रूरी ही होगा।

भूषण : ये तो ठीक है, पर इस तरह कब तक बैठूँ। मुझे तो बतलाया गया था कि वकील साहब आठ बजे ही ऑफ़िस में आ जाते हैं।

मुंशी : आपको ग़लत नहीं बतलाया गया है। हुँ, कभी-कभी कुछ हेर-फेर हो जाता है।

भूषण यदि पहिले से पता होता तो थोड़ा समय सड़क पर काटता। बहुत कुछ मिल जाता है, किनारे पर ही पड़े होने से! **(बाहर की खिड़की के पास आकर)** आपको भी मानना होगा मुंशी जी!

मुंशी . **(अपनी धुन में)** मैं आपका विरोध क्यों करूं।

भूषण . **(दूसरी खिड़की के पास आकर)** या बगीचे में ही टहलता। बैठे-बैठे तो जी ऊब रहा है। इधर ये भी सोच रहा हूँ कि ऑफ़िस में आते ही वे कोर्ट जाने की बात सोचने लगेंगे।

मुंशी : वकील साहब कचहरी नहीं जाते।

भूषण : **(याद करते हुए)** हाँ....हाँ....हाँ! ये तो मैंने सुना था कि इधर कुछ दिनों से वे कोर्ट नहीं जाते, घर पर ही सलाह दिया करते हैं। **(अटकते हुए)** प.....पर.....ऐसा तो कोई नहीं करता।

मुंशी : (**'पर' पर जोर देकर**) पर, हमारे वकील साहब ऐसा करते हैं। (**गर्व से**) वे चेम्बर प्रेक्टिस करते हैं।

भूषण : (**खिड़की के पास से घूमकर अन्दर के दरवाजे का पर्दा हटाते हुए**) कारण ?

मुंशी : (**कुछ तेज स्वर में**) जगभूषण जी ऐसे आइए। वो वकील साहब के घर का पर्दा है, किसी नौटंकी का नहीं।

भूषण : (**घूमकर कुछ झेंपते हुए**) मैं ज़रा जल्दी में था, सोचा.....

मुंशी : (**बीच में**) आपके झांकने से तो वकील साहब खिंच नहीं आयेंगे, यों आप जानते हैं कि मैं उन्हें खबर दे चुका हूँ। (**फोन की घंटी बजती है। मुंशी जो आकर रिसीवर लेते हैं**) जी मैं खैरातीलाल। कौन अच्छा....अच्छा....मित्रा जी हैं। आप ग्यारह बजे आइए (**रिसीवर रखकर जगह पर आते हैं**)।

भूषण : (**मुंशी की ओर देखते हुए**) आपसे कैसे कहूँ मुंशी जी कि मैं कितनी जल्दी में हूँ। मुझे एक-एक मिनिट भारी लग रहा है। वकील साहब से बातें करने पर ही बोझ हलका होगा।

मुंशी : (**टाइपराइटर का रोलर तेजी से खींचते हुए**) इतनी घबराहट तो उनमें भी नहीं देखी जो खून करके आते हैं।

भूषण : (**चौंककर**) तो आपका मतलब है कि मैं खूनी हूँ।

मुंशी : देखिए जगभूषण जी, कानून में तो मेरे या आपके मतलब के लिए कोई गुंजाइश नहीं। यों जो सच होगा, वकील साहब को तो बतलाना ही होगा।

भूषण : बड़े अज़ीब आदमी हैं आप। अपनी ही कहे जा रहे हैं। (**कुछ क्रोध से**) मुझे खूनी कहकर भी आप शर्मिन्दा नहीं।

मुंशी : (**टाइपराइटर का रिबॅन लपेटते हुए**) जगभूषण जी, क्या

मेरी उमर अब शर्माने की रही है ! **(हँसकर)** वैसे इस पेशे की शर्म से पुरानी दुश्मनी है।

भूषण · **(तेज होकर)** आप माफ़ी माँगने के बदले बात बढ़ाते ही जा रहे हैं !

[वाक्य पूर्ण होने के पहिले अरूप का अन्दर के दरवाज़े से प्रवेश होना है ! साधारण वेश-भूषा। रंग गोरा पर चेहरा चोटों के निशानों से विकृत। अरूप को देखते ही मुंशी जी टाइपराइटर छोड़कर खड़े हो जाते हैं। जगभूषण उस ओर मुड़ते हैं ।]

अरूप : **(तपाक से)** तो मुंशी जी के बदले माफ़ी मैं माँग लेता हूँ...... आप से........आप . .....।

भूषण **(कुछ अटपटाकर)** जगभूषण। जगभूषण कहते हैं मुझे। आपसे मिलने आया हूँ। आपकी राह देखते-देखते ऊब रहा था और इधर मुंशी जी... .. . ।

अरूप . मैं क्षमा चाहता हूँ। बात ये है ... ज.. ..कुलभूषण जी.......

भूषण **(बीच में)** कुल नहीं। **(ज़ोर देकर)** जग। जगभूषण।

अरूप **(हँसकर)** अब तो एक क्षमा और माँगनी होगी। तो जगभूषण जी मेरे मेरी बहिन पूजा करती है, और बिना प्रसाद लिए मुझे ऑफ़िस में बैठने ही नहीं देती। आज उसकी पूजा में देर हो गई और इसीलिए मुझे भी देर हो गई।

भूषण · जी, कोई बात नहीं ! **(मुंशी की ओर तिरस्कारपूर्ण दृष्टि फेंककर)** मैं तो तंग आ गया था, आपके मुंशी जी की बातों से ! बातें बढ़ाना ये खूब जानते हैं।

अरूप **(हँसकर)** मुंशियों का काम ही बात बढ़ाना होता है। जब बातें बढ़कर बहस की सीमा तक आ जाती है तब वकील का प्रवेश होता है। पर मैं आपसे सच कह रहा हूँ, मेरे मुंशी जी

आदमी भले हैं **(भूषण मुंशी जी को देखते हैं। मुंशी जी मुंह घुमा लेते हैं)**।

मुंशी : **(रूखे भाव से)** मैं रुकूँ, या आपकी और इनकी बातें पूरी होने तक बाहर रहूँ?....वैसे आज आपने सभी लोगों को ग्यारह के बाद बुलाया है क्योंकि... आज सबेरे आप कहीं जाने वाले थे।

अरूप : **(मुस्कुराते हुए)** पर अब कहीं नहीं जाऊँगा—हाँ—आप जाइए पर बाहर नहीं। मधु का कुछ काम है, उसे पहिले देख लीजिए! **(मुंशी जी भूषण की ओर घूरते हुए भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं)** अब कहिए जगभूषण जी, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ।

भूषण : आप मुझे भूषण ही कह सकते हैं। मुझे इसी नाम से लोग पुकारते हैं। **(अरूप मुस्कुराते हैं)** मैं कुछ ज़रूरी सलाह चाहता हूँ। **(रुककर)** बात कुछ ऐसी उलझी है कि बिना कानूनी दाँव पेंच से सुलझेगी नहीं।

अरूप : **(बगीचे की ओर की खिड़की के पास जाकर अस्त-व्यस्त लता को सँवारते हुए)** मैं वकील हूँ, ये आपको याद है, इसलिए, मुझसे सिर्फ़ मुक़दमें के बारे में ही सलाह माँगियेगा।

भूषण : **(आश्चर्य से)** तो क्या लोग आपके पास कुछ दूसरी सलाहों के लिए भी आते हैं?

अरूप : **(बगीचे की ओर देखते हुए)** मेरा माली बड़ा होशियार है। मेरे बगीचे का एक-एक फूल उसकी प्रशंसा में खिलता है और उसके अभाव में सूख जाता है! पर वह तरकारी-भाजी की खेती नहीं जानता फिर भी पड़ोसी सलाह लेने आ ही जाते हैं। **(रुककर घूमते हुए)** आप मेरा मतलब तो समझ रहे हैं न?

भूषण : तो आपका माली सलाह दे देता है।

अरूप : जी नहीं। वह मेरा माली है इसलिए। (**दूसरी खिड़की की ओर जाते हुए**) ये सड़क देख रहे हैं आप। सुबह-शाम, सूने में यह सड़क प्रेमियों के लिए मिलनस्थल बन जाती है। एक बार एक मूर्ख प्रेमी ने मुझे इसी खिड़की में खड़ा देखकर पूछा था—वकील साहब मैं अमुक लड़की से प्रेम करूँ या नहीं। (**हँसकर**) अब आप ही बतलाइए कि मैं क्या उत्तर देता।

भूषण : पर आपने कुछ उत्तर तो दिया ही होगा।

अरूप : (**पुस्तकों की आलमारी की ओर बढ़ते हुए**) मैंने कहा था—प्रेम के विषय में पुलपर बैठे किसी संन्यासी से पूछो। पर जब प्रेम में दिल टूटे, सिर फूटे या आत्महत्या की नौबत आ जाये तो मेरे पास आना।

भूषण : मैं जिस विषय की सलाह लेने आया हूँ, वह कुछ.....बहुत कुछ ऐसा ही.....(**फ़ोन की घंटी बजती है।**)

अरूप : एक मिनिट भूषण जी! (**फ़ोन के पास जाकर रिसीवर उठाते हैं। भूषण की आँखें आलमारी की पुस्तकों पर और कान फ़ोन पर लगे हैं**) हलो..जी..जी हाँ—मैं अरूप बिहारी ही बोल रहा हूँ...।... ओ! वर्मा जी हैं! कहिए, क्या आज्ञा है!.....किसे भेज रहे हैं.....?.....आपके मित्र.... तो फिर मेरे भी मित्र ही हुए।....नाम? हैं.....हाँ.....नाम ब..... धरमदास! अच्छा। केस क्या है?.....वे ही समझा देंगे! ठीक! भेज दीजिए...मैं घर पर ही हूँ।....यही आधे घंटे बाद पर ग्यारह के पहिले! हूँ..... मैं ब्रीफ बना दूँगा... कोर्ट वाला तो काम आपको ही करना होगा।...नहीं...नहीं... मैंने कोर्ट वाली बात तो छोड़ दी है। वर्मा भाई इस विषय को न छेड़ो तो अच्छा है।.....ठीक....नमस्ते! (**रिसीवर**

रखकर घूमते हैं। भूषण पुस्तकों मे उलझे रहने का अभिनय कर रहे हैं।) हाँ, भूषण जी, अब आप अपनी बात कहिए।

भूषण : **(बनते हुए)** कोई और साहब आ रहे हैं क्या ?

अरूप : **(मुस्कुराते हुए)** वकील का घर और भगवान का मंदिर किसी को नहीं रोकता। पर वे आधे घंटे बाद आयेंगे। तब तक आपकी बात तो हो ही जाएगी।

भूषण : पर वे हैं कौन ?

अरूप : मैं खुद नहीं जानता। मेरे एक मित्र हैं, एडवोकेट वर्मा। वे ही भेज रहे हैं उन्हें। नाम बतलाया है लाला धरमदास।

भूषण : (गंभीर होकर) धरमदास।

अरूप : आप पहिचानते हैं क्या ? **(स्वर बदल कर)** और फिर एक नाम के कई आदमी भी तो हो सकते है। यदि आप उनसे मिलना चाहें, तो उनके आने तक रुक सकते हैं।

भूषण : जी नहीं। ऐसी कोई बात नही। मैं थोड़े में अपनी बात कह देता हूँ। आप उस पर विचार कीजिएगा, मै कल फिर आ जाऊँगा। अभी अधिक समय नहीं लूँगा।

अरूप : आप बात भी तो कहिए।

भूषण : बात एक विधवा के संबंध मे है। **(अरूप के चेहरे पर आंखें गड़ा देते हैं।)**

अरूप : इतनी-सी बात से तो बात नही बनेगी। कैसी विधवा है, उसने क्या अपराध किया है। सारी बातें सुने बिना मैं क्या कह सकूँगा।

भूषण : पहिले यह बतलाइये कि विधवाओं के विषय में आपके क्या विचार हैं ?

अरूप : मेरे विचार कानून के विचार तो होंगे नहीं। यों व्यक्तिगत रूप से मैं उन्हें पूरी तरह स्त्री तो मानता ही हूँ। उनके प्रति सहानुभूति और श्रद्धा के भाव रखता हूँ।

भूषण : (**सिगरेट निकालकर अरूप की ओर बढ़ता है, अरूप हाथ जोड़कर क्षमा माँगते हैं। सिगरेट सुलगाते हुए**)पर साधारण लोग तो उनकी उपेक्षा करते हैं।

अरूप : लोगों की बात छोडिये। एक पति को जीवित छोड़कर दूसरा पति चुनने वाली स्त्रियों का हमारे समाज में मान है, पर पति को खोकर उसके लिए रोने वाली स्त्रियों की हम उपेक्षा करते हैं। (**रुककर**) भूषण जी हम लोग नियति के निर्णय पर कम और स्वयं के निर्माण पर अधिक विश्वास करने लगे हैं।

भूषण : सच तो है। पर...(**रुक जाते हैं !**)

अरूप : पर क्या ?...खैर, इस बहस से क्या ! आप तो उस विधवा के विषय मे बतलाइये, जिससे आपके मुक़दमें का सबंध है।

भूषण : (**बाहर की खिड़की मे से मुंह का धुंआँ उड़ाकर घूमते हुए**) मुझे एक ऐसी विधवा की बात कहना है, जो पुनर्विवाह के लिए तैयार नहीं होती और यह भी छिपाती है कि वह विधवा है।

अरूप : छिपाती है ? इसका कारण ?

भूषण : पूरी तरह मै भी नही समझ पाया। पर जहाँ तक मैंने समझा है, वह समझती है कि कुमारी कहलाकर वह समाज में अधिक मान पा सकेगी। (**रुककर**) उसके विधवा होने की कहानी है; उसी के विषय मे आपकी सलाह चाहिए।

अरूप : आप तो पहेली बुझा रहे है। पहिले पूरी बात तो कहिए.....।

भूषण : आप वकील है; और अभी मैं आपसे मित्रता का दावा भी नहीं कर सकता.....

(**फ़ोन की घंटी फिर बजती है। भूषण मुंह बनाकर रुक जाते हैं। अरूप फ़ोन की ओर बढ़ते हैं।**)

अरूप : (**रिसीवर उठाकर**) अरूप बिहारी !... हाँ, वर्मा जी क्या नयी मुसीबत आ गई इतनी जल्दी।...मैंने कहा था न कि आप उन्हें आधे घंटे में भेज दें.....क्या वे चल पडे ...और

पहुँचते ही होंगे....ग़ज़ब के आदमी हैं। और जब चल ही पड़े हैं तो मैं कह ही क्या सकता हूँ (**हँसी**)...ठीक है, आने दीजिए। (**रिसीवर रखकर**) फ़ोन भी कभी-कभी बड़ा भारी सरदर्द बन जाता है। क्षमा कीजिए।....हाँ तो आप क्या कह रहे थे ?

भूषण : (**रूखेपन से**) वो सज्जन आ ही रहे होंगे; और मेरी बात काफ़ी लम्बी है—बहुत समय लेगी। मैं सोचता हूँ, अभी चलूँ फिर किसी समय आ जाऊँगा। यहाँ कुछ दिन रुक ही रहा हूँ। कोई जल्दी तो है नहीं।

अरूप : पर शुरु में तो आप बड़े उतावले दिख रहे थे !

भूषण : (**सिगरेट का कश खींचते हुए**) उतावलापन तो आपसे मिलने के लिए था। (**हँसकर**) अभी चलता हूँ, फिर दर्शन करूँगा ! (**अरूप हाथ उठाते हैं अभिवादन का छोटा-सा उत्तर भूषण देता है**) जी, नमस्ते ! (**प्रस्थान**)

अरूप : (**घूमते हुए गंभीर मुद्रा में**) मुंशी जी, मुंशी जी !

(**माधवी प्रवेश करती है। उसकी गोद में कुत्ते का पिल्ला है। माधवी को देखकर अरूप के चेहरे पर प्रसन्नता मिली आश्चर्य की रेखा खिंच जाती है।**)

माधवी : भैया, मुंशी जी बाहर गए हैं, मैंने भेजा है। जो काम हो मुझसे कहिए। (**पिल्ले को प्यार करते हुए**) अभी मैं पद्मा का काम कर रही थी !

अरूप : (**आश्चर्य से**) पद्मा ?

माधवी : (**प्रसन्न होकर**) हूँ। (**पिल्ला दिखलाकर**) आप भूल गए, इसका नाम मैंने पद्मा ही तो रखा है। देखिए न, कितनी सुन्दर है अभी से। (**हँसकर**) जहाँ भी रहेगी मोहल्ले भर पर राज करेगी।

अरूप : तो मधु, तुम्हारी यह नन्ही कुतिया पद्मा रानी कहलाएगी ?

माधवी : हाँ, भैया ! देखिए न इसकी सुन्दरता को, और बतलाइये कि इसका नाम और हो भी क्या सकता है।

अरूप : (**कुछ गंभीर होकर**) सुन्दरता। मधु किसकी रही है जो तुम्हारी इस पद्‌मा की रहेगी।

माधवी : (**सँभलकर**) भैया ऊपरी सुन्दरता की ही बात नही कर रही मैं। मेरा मतलब स्वभाव से भी है। देखिए न, अभी से ही यह कितनी स्वामि-भक्त है।

अरूप : (**बगीचे की खिड़की से बाहर देखते हुए**) मधु, आज सुन्दरता का अर्थ वही है, जो सरलता से आँखों की सीमा में आ जाता है। (**सांस लेकर**) इसके आगे कुछ नहीं। खैर, अपनी पद्‌मा की देखरेख में इस बात का ध्यान रखना कि उसमे आदमी की आदतें न आने पाएँ नहीं तो कुत्तों का सारा समाज उससे घृणा करने लगेगा ! (**घूमते हुए**) हाँ, तुमने यह नहीं बतलाया कि तुमने मुशी जी को कहाँ भेजा है ?

माधवी : सेवासदन हॉस्टल तक। वहाँ मेरी सहेली रहती है—गाथा। मैंने उसे ही बुलवाया है। (**अरूप शून्य दृष्टि से माधवी को देखता है। माधवी पिल्ले को पुचकार कर बात आगे बढ़ाती है**) गाथा आपसे मिलना चाहती है, उसे आपसे कुछ कानूनी सलाह लेना है।

अरूप : (**शून्यभाव से**) हूँ।

माधवी : (**चपलता से**) हूँ, नहीं भैया। उसकी सहायता आपको करनी ही होगी। मैंने वचन दे दिया है। कुछ उलझन आ पड़ी है बेचारी पर, बड़ी उदास रहती है ! भैया उसके फूल से चेहरे पर उदासी मुझे शूल-सी लगती है। (**स्नेह से**) (**अरूप के पास आकर**) सच भैया, कालेज में उस जैसी सुन्दर और कोई लड़की नहीं है। जितनी सुन्दर है, उतनी ही भोली भी है। उसकी उदासी मुझसे नहीं देखी जाती।

अरूप : (**गंभीरता से साँस लेकर**) बहुत सुन्दर है ?

माधवी : बहुत ! (**प्रसन्न होकर**) कालेज़ कामन रूम में, केन्टीन में सभी लड़के घूम-फिर कर उसकी सुन्दरता पर कुछ न कुछ चर्चा कर ही लेते हैं। (**तेज़ी से**) पर भैया बड़ी अनोखी आदत है उसकी, अपनी सुन्दरता छिपाकर रखना चाहती है! बनने-सँवरने की बात कहो तो चिढ़ जाती है। (**रुक कर**) पर जो सचमुच सुन्दर हो, उसे बनने-सँवरने की क्या ज़रूरत ? ठीक है न भैया ! (**अरूप माधवी के हाथ से पिल्ला लेकर उसे ध्यान से देखते हैं।**) रीता तो कह रही थी कि यदि उसे गाथा जैसी सूरत मिलती तो वह पूरी यूनिवरसिटी में खलबली मचा देती।

अरूप : (**उसी धुन में**) रीता ?

माधवी : हाँ, रीता। आपके कौल साहब की बहिन ! गाथा के बाल देखने के पहिले उसका विचार था कि उस जैसे सुन्दर तथा लम्बे बाल किसी और के हो ही नहीं सकते। (**हँसकर**) लखी कौर को अपनी नाक पर नाज़ था, वाणी मुकर्जी अपनी आँखों को बेजोड़ मानती थी, पर गाथा के सामने सब एक तरफ़ रह जाती हैं। वह किसी से बोलती नहीं इसलिए सब उसे घमंडी कहते हैं पर वह मुझसे तो खूब बोलती है। मुझे ही अपनी सच्ची सहेली मानती है। आप मिलेंगे तो आप भी मान जायेंगे उसके स्वभाव और उसकी सुन्दरता को.....।

अरूप : (**अचानक तीखे स्वर में**) मुझे नहीं मिलना किसी से। (**कुत्ते का पिल्ला जमीन पर फेंक देते हैं—पिल्ला 'कैं ई' करता है। माधवी उसे उठा लेती है।**) अपनी इस सुन्दर पद्मा को भी मेरी आँखों के सामने से ले जाओ और अपनी उन सुन्दर सहेली को खबर दे दो कि मुझसे मिलने न आयें। इस शहर में मैं ही अकेला वकील नहीं हूँ।

माधवी : (**डरे स्वर में**) प. . पर भैया मैंने तो वचन.....! (**पिल्ले को उठाती है।**)

अरूप : (**उसी स्वर में**) मैं कुछ नहीं जानता। तुमने वचन दिया है तुम जानो मैं किसी से नहीं मिलूंगा ! (**माधवी की ओर देखकर**) खड़ी क्यों हो जाओ और यदि सुन्दर पद्मा की टाँग न टूटी हो तो फिर पटक देना, लँगड़ी हो जाये तो अच्छा है। (**साँस लेकर**) सुन्दर है....!

माधवी : (**डरे स्वर में–धीरे-धीरे**) भैया ! आप यों ही नाराज़ हो रहे हैं। सोचिए मैं उससे क्या कहूँगी ।....उसके सामने मेरी क्या इज़्ज़त रह जाएगी..... आखिर सखियों में मेरा भी कुछ मान है।....

अरूप : (**उसी स्वर में**) सखियों मे तो तुम्हारा मान है। तुम्हे अपने वचन की फिक्र है।....पर तुम्हें यह नहीं सूझा कि वचन देने से पहिले तुम मुझसे पूछ लेती ! उस समय तो भैया घर का नौकर मालूम हुआ होगा, जिससे जो चाहा करा लिया। (**माधवी भयभीत मुद्रा में अरूप को देखती है**) मधु ! तुम्हारी हर आवश्यकता पूरी होती है–जीवन का कोई सघर्ष तुम्हें छू नहीं पाता–इसीलिए तुम्हारे दिमाग़ में मान-सम्मान के ये झूठे चित्र घुस गये हैं। पर इनका मुझ पर कोई असर नही होगा। मैं वही करूँगा जो ठीक समझूँगा ! (**आवाज ऊँची कर**) मैं कहता हूँ, चली जाओ मधु !

(माधवी घबराकर अन्दर चली जाती है। अरूप विचारों में उलझा अन्दर की खिड़की से झाँकता है। तभी बाहर खिड़की से धरमदास दिखाई देते हैं–सिर पर पंजाबी पगड़ी और दाहिने बगल में बैसाखी। अरूप का ध्यान उस ओर नहीं है।)

धरमदास : (**खिड़की के पास आकर**) अरूप बिहारी एडवोकेट का आफ़िस यही है न ?

अरूप : (**चौंककर**) जि....जो हाँ। मैं हूँ अरूप बिहारी। अ...आप ?

धरम : मुझे वर्मा एडवोकेट ने भेजा है। मैं लाला धरमदास ! आपको उन्होंने फ़ोन भो.....

अरूप : (**बीच में**) मैं समझ गया। (**बाहर के दरवाजे की ओर संकेत कर**) उस दरवाज़े से तशरीफ़ लाइए!

[धरमदास खिड़की से हट जाते हैं। अरूप स्वस्थ होकर प्रसन्न मुद्रा बनाकर प्रवेश द्वार के पास पहुँच जाते हैं ! तभी धरमदास का प्रवेश होता है।]

अरूप : आइए ! मैं आपको ही राह देख रहा था।

धरम : (**हँसकर**) मेरी राह देख रहे थे आप....और चेहरे पर इस मायूसी को लिए ? (**आगे बढ़ते हुए**) वकील साहब मैं आपसे साफ़ साफ़ कहूं—मैं मायूसी और मनहूसी से दूर भागता हूँ। एक्सीडेन्ट में यह दाहिनी टाँग गई पर देखिए चेहरे पर से हँसी नहीं गई ! (**रुककर**) मुझपर हमेशा चार-छ. केस चला ही करते हैं—वर्मा साहब जानते हैं। पर वे यह भी जानते हैं कि मेरे माथे पर कभी शिकन नहीं पड़ी। (**मुंशी की टेबल पर बैसाखी टिकाकर उनकी टेबुल पर बैठते हुए**) कई प्रेम किये और (**जोरों से हँसकर**) शायद ही कहीं जीता पर उसके बाद भी मैंने ज़िन्दगी को मस्ती को कायम रखा है।

अरूप : आप यहाँ कहाँ बैठ रहे हैं। (**बैसाखी लेकर सहारा देने की कोशिश करते हुए कुर्सियों की ओर संकेत कर**) उधर आराम से बैठिए।

धरम : (**टेबल पर पूरी तरह जमते हुए**) मैं यहीं ठीक हूँ वकील साहब (**हँसकर**) आदत हो गई है, ऊँचे आसन पर बैठने की। आप मेरी फिकर मत कीजिए और अपनी कुर्सी संभालिए।

अरूप : मुझे तो आप से बातें करना है। आपके केस के बारे में सुनना है। मैंने वर्मा जी से वादा किया है कि आज ही

शाम तक आपके केस का ब्रीफ उन्हें दे दूंगा। और बैठने पर मुझसे जल्दी काम नहीं होता। (**मुस्कुराकर**) मैं सोचता हूँ घूमकर और लिखता हूँ बैठकर। आप कहिए मैं सुनूंगा और सोचूंगा!

धरम : वर्मा साहब ने आपसे कुछ नहीं कहा?

अरूप : जी नहीं। उन्होंने तो यह कहा कि आप ही सब कुछ बतलायेंगे। और हमारे लिए यही ठीक होता है कि जिसका केस हो, वही सारी बातें बतलाए।

धरम : कोर्ट में भी आप ही खड़े होंगे?

अरूप : मैं वर्मा जी से कह चुका हूँ। मैं आपके केस के बारे में अपनी राय उन्हें लिख दूंगा। बाकी काम वे करेंगे।

धरम : (**हँसकर**) ये भी ठीक ही है। एक दिल को दो दिमाग़ों का सहारा इस तरह मिल जायगा।

अरूप : एक दिल को। क्या कुछ दिल की ही बात है केस में?

धरम : बिलकुल दिल की। (**हँसकर**) वकील साहब आपकी शादी तो नहीं हुई?

अरूप : (**कुछ गंभीरता से माथे की चोट का निशान दिखलाकर**) मेरे माथे की सीधी रेखा देख रहे है।

धरम : सीधी रेखा?

अरूप : जी हाँ। यह रेखा चोट का निशान ही नहीं, वरन् मेरी सुन्दरता का पूर्ण विराम भी है। (**रुककर**) आजकल सभी लड़कियाँ सुन्दर वर चाहती हैं। (**साँस लेकर**) और मैं किसी की परिस्थितियों का लाभ उठाकर उसके गले की फाँस नहीं बनना चाहता।

धरम : मेरा ख्याल है इस चोट के लगने के पहिले आप बहुत खूबसूरत रहे होंगे। (**अचानक हँसकर**) ठीक, कहा न मैंने?

अरूप : लोग तो यही कहते थे। पर छोड़िए पुरानी बातों को।

धरम : आप भी कैसी बातें कर रहे हैं। सारी पुरानी बातें अगर इसी तरह छोड़ दी जाएँ तो हमारी ज़िन्दगी में बचेगा क्या ? (**रुककर**) मेरा मतलब था उसी समय आप शादी कर लेते तो आज ये मायूसी न होती।

अरूप : (**सांस लेकर**) उन दिनों मुझे कोई लड़की पसन्द ही नहीं आती थी ! (**अचानक रुककर**) पर मेरी ज़िन्दगी से आपको क्या ? आप अपनी कहिए।

धरम : (**बैसाखी लेकर बाहर की खिड़की तक आकर**) वकील साहब इस खिड़की से दूर सड़क पर चलता हर आदमी एक सा नज़र आता है। (**घूमते हुए**) मेरे दिमाग़ मे भी एक ऐसी ही खिड़की है, जिसमें से मुझे हर दूर का आदमी एक सा—अपना सा—नज़र आता है। मैं आपको अपने ही समान मानता हूँ !

अरूप : (**चौंककर**) अपने समान ?

धरम : (**हँसकर**) आप चौक क्यों गए ? आप ही क्या सभी लोग मुझे एक से लगते हैं। सब में मुझ सी आदतें हैं—मुझ सी ही बुराइयाँ हैं। सच मानिए हम सब एक ही कँटीले-सूखे दरख्त के टुकड़े हैं। मेरे काँटे लोगों को गड़ें—दूसरों के शायद नहीं गड़ पाए ! तक़दीर की बात है कि मेरी बुराइयों का ढोल पिट गया और मुझे कोर्ट तक आना पड़ा !

अरूप : आपके विचार से हर आदमी सहमत हो, यह आवश्यक तो नहीं।

धरम : बिलकुल ज़रूरी नहीं; पर मैं तो यही सोचता हूँ। ख़ैर, अब ये बतलाइये कि आपने.....(**रुककर**) माफ़-कीजिएगा बड़ा नाज़ुक सवाल कर रहा हूँ....आपने कभी प्रेम वग़ैरह..... (**हँस पड़ते हैं**)।

अरूप : प्रेम ! धरमदास जी प्रेम तो शादी से भी कठिन वस्तु है। शादी की लपेट में तो बहुतों का भाग्य जग जाता है, पर प्रेम

तो खुला व्यापार है। यह तो देखभाल से ही प्रारम्भ होता है। (**रूखी हँसी के साथ**) शादी का ब्लेक मार्केट यहाँ नहीं हो सकता।

धरम : (**तपाक से**) देखिए, यहाँ आप मेरे क़रीब आ गए। (**रुककर**) आप नहीं समझे। आप मेरे दिमाग़ की खिड़की के करीब आ गए और अब आप मुझे दूसरे लोगों से कुछ अलग दिखाई देने लगे। मुझसे भी कुछ अलग। (**बगीचे की ओर वाली खिड़की की ओर बढ़ते हुए**) वकील साहब, मैं तो अपने को नहीं देखता, हर सुन्दर चीज़ को देखता हूँ और उससे प्यार करता हूँ।

अरूप . हर सुन्दर चीज़ को देखते हैं—और उसे प्यार करते हैं।

धरम : जी हाँ! प्यार के लिए आज पैसा चाहिए और आपकी दया से मेरे पास पैसा रखने की जगह की कमी है। (**रुककर**) यह बात दूसरी है कि इस पैसे से जो प्यार मैंने खरीदा—वह गहरा न हो पाया; और मुझे अकसर चक्कर में फँसना पड़ा। (**हँसी**)

अरूप . तो अभी भी किसी चक्कर में फँस गये हैं क्या?

धरम : (**मस्ती में**) और नहीं तो वर्मा साहब और आप मुझे क्यों याद आते।

अरूप : ओ! तो ये बात है? अच्छा अब आप अपनी बात पूरी तरह कहिए।

धरम : वकील साहब, एक बात पहिले कह दूँ कि मेरी शादी नहीं हुई है। यों उम्र देखते हुए मेरी शादी बीस साल पहिले हो जानी थी। पर यह भी साफ कह दूँ कि यह टूटी टाँग शादी के बीच कभी नहीं आई। ये बेचारी तो अभी पाँच साल की है। बात दरअसल ये है कि शादी की उलझन को मैंने हमेशा बेवक़ूफी माना है। (**हँसकर**) औरत को नहीं।

अरूप : आपका मतलब है कि शादी से बचकर भी आपने औरत से घृणा नहीं की।

धरम : (**ज़ोर देते हुए**) वकील साहब मैंने तो हमेशा औरत की पूजा की है। मुझे औरत से मिला भी ख़ूब है—सुख-आनन्द पैसा—सभी कुछ।

अरूप : ये आखिरी चीज़ मैं नही समझा !....पैसा !

धरम : ये तो आप जानते हैं कि मैं व्यापारी हूँ। दस तरह के काम, पन्द्रह तरह के ठेके। और इन सभी कामों में मैंने औरतों से मदद ली है। मेरे स्टॉफ में काफी औरतें हैं। (**हँसकर**) कड़ा से कड़ा अफसर इनकी मदद से मैंने मुट्ठी में किया है। (**बैसाखी के सहारे चलते हुए**) अफसर आए और चले गए पर लाला धरमदास जहाँ के तहाँ जमे हैं।

अरूप : ये सब तो मेरी समझ में आ गया। अब कुछ केस की बात भी हो जाए तो अच्छा है।

धरम : उसी पर आ रहा हूँ। (**रुककर**) वकील साहब मेरे स्टॉफ में एक लड़की थी, थी क्या, है। मैं उस पर बहुत भरोसा करता था। खास-खास काम भी वही करती थी।

अरूप : सुन्दर भी थी ?

धरम : जी हाँ ! तो उस लड़की को मैंने कुछ हज़ार रुपये देकर एक टेन्डर पास कराने एक अफसर के पास भेजा। (**कुछ तेज़ होकर**) और उस औरत ने मुझे गड्ढे में ढकेल दिया।

अरूप : आफीसर से मिल गई क्या ?

धरम : मैं भी यही समझता हूँ। वकील साहब उसने तो पुलिस के सामने भी कह दिया कि मैंने रिश्वत देने के लिए रुपये देकर उसे भेजा था। (**रुककर**) इधर मैंने पुलिस अफसरों की पेंशन बंद कर दी थी, इसलिए पुलिस मुझ पर चढ़ बैठी। अब आप ही बतलाइए कि क्या किया जाए।

अरूप : **(सोचते हुए)** आजकल वह लड़की है कहाँ ?

धरम : यहीं है, शहर में। पर मेरे यहाँ आना उसने छोड़ दिया है। क्या बतलाऊँ आपको, ये एक पकड़ क्या मिली पुलिस को, कि मुझ पर गुंडई और पार्टीबन्दी के इलज़ाम भी लग गये। अब सारी चीज़ें एक साथ हैं। **(सोचते हुए)** वो कौन सा सेक्शन होता है....एक सौ.... **(रुक जाता है)**।

अरूप : एक सौ सात ! **(धरमदास चुप हैं)** एक सौ नौ ?

धरम : दोनों ही हैं वकील साहब ! अब आपको और वर्मा साहब को ही सब कुछ ठीक करना है।

अरूप : वर्मा जी को तो आपने सारी बातें बतलाई होंगी।

धरम : जी हाँ ! पिछले एक साल से वे मेरे वकील हैं।

अरूप : मैं चाहता था कि उनसे कुछ बातें कर लेता तो अच्छा होता। **(सोचते हुए)** आपका केस मामूली नहीं है।

धरम : **(हँसकर)** मामूली केस तो मामूली आदमियों के होते हैं वकील साहब। खैर, आइए कार है मेरी, उसी पर अभी ही चले चलिए। वर्मा साहब अभी तो घर पर होंगे।

अरूप : **(कुछ हिचकिचाहट से)** अभी हो.....

धरम : जी हाँ। हर्ज़ क्या है ? वकील साहब, मैं तो उनमें से हूँ जो दिल में बात आते ही उसे पूरी करने के क़ायल हैं। **(रुककर)** आपको कोई अड़चन है ?

अरूप : आफिस में कोई नहीं है। **(हँसकर)** नौकर बुढ़ापे में तीसरी शादी करने गया है और मुंशी जो बहिन की सखियों की सेवा में लगे हैं।

धरम : दोनों ही बड़े आदमी मालूम होते हैं और मैं चाहता हूँ कि उनके मालिक होने का हवाला आप ज़रूर दें। **(रुककर हँसते हुए)** बड़े आदमी आफिस की फिकर नहीं किया करते। वर्मा साहब को फ़ोन कर दीजिए और बैठिए कार में।

अरूप : आप चाहते हैं तो चलता हूँ। (**फ़ोन का डायल कर**) हलो... वर्मा जी हैं.....मैं अरूप बिहारी।..... आए हैं....उनसे काफी बातें हुई हैं.....। पर आपसे कुछ उन्हीं के केस के बारे में बातें करना है।.....तो मैं लाला धरमदास के साथ ही दस मिनिट में पहुँच रहा हूँ.....हाँ.... (**हँसी**) ठीक। (**रिसीवर रखकर**) मुझे पाँच मिनिट दीजिए कि मैं कपडे बदल लूँ।

धरम : (**हँसकर**) पाँच नहीं, छः मिनिट लीजिए।

अरूप : (**यहाँ-वहाँ देखकर**) आपको कोई पेपर वगैरह दे दूँ।

धरम : जी नहीं, रहने दीजिए! टैन्डर नोटिस मेरे पास आ ही जाते हैं। बाकी लड़ाई-झगड़े और मार-पीट की खबरों से मुझे कुछ लेना-देना नहीं। और ये बात भी नहीं है कि मैं अगर खबरों में दिलचस्पी न लूँ तो अखबारों का नुकसान होगा। हाँ, अखबारों में उलझने से मेरा वक्त जरूर खराब हो सकता है।.....आप तो जाइए, मैं सड़क पर सरकते चेहरे पहिचानने की कोशिश करूँगा।

अरूप : जैसी इच्छा आपकी।

[**अरूप का अन्दर के दरवाजे से प्रस्थान। धरमदास आलमारी के आस-पास घूमकर बाहर की खिड़की के पास खड़े हो जाते हैं और सिगरेट निकालकर जलाते हैं। फिर दूर किसी को गौर से देखते हैं।**]

धरम : (**पुकारकर**) माइकिल! (**और जोर से**) माइकिल!

माइकिल : (**दूर से**) जी, हाज़िर हुआ। (**पीछे से ही खिड़की के पास आकर**) जी (**माइकिल ड्राइवरों की शानदार सफेद ड्रेस पहिने हैं। रंग काला है**)

धरम : कितना पेट्रोल भराया है गाड़ी में?

माइकिल : पच्चीस लिटर।

धरम : (**कश खींचकर**) ये क्या हुआ। लिटर-फिटर मैं नहीं जानता; कम से कम दस गैलन भरा लो। यहाँ से अभी वर्मा साहब के घर जाना है। उसके बाद मुझे शाम तक घूमना है।

माइकिल : जी बहुत अच्छा। वर्मा साहब के घर आपको छोड़कर मैं पेट्रोल भराने चला जाऊँगा।

धरम : और देखो इन नये वकील साहब का खूब ख्याल रखना। काम के आदमी लगते हैं।

माइकिल : (**याचना के स्वर में**) सेठ जी, मेरे लिए भी बात कर लीजिएगा। (**धरमदास की गंभीर मुद्रा देखकर**) पुलिस मेरे पीछे भी तो पड़ी है।

धरम : (टालते हुए) अच्छा, अच्छा, देख लूँगा। तुम गाड़ी के पास जाओ। जमाना बुरा है, नयी गाड़ी इस तरह छोड़ना ठीक नहीं।

माइकिल : जी।

[**माइकिल खिड़की से ओझल हो जाता है। धरमदास घूमते हैं और विचारों में लीन सिगरेट फूंकते हैं। इसी समय खिड़की से मुंशी जी दिखते हैं। खिड़की के पास आकर वे आश्चर्य से झांकते हैं और जल्दी-जल्दी दरवाजे से अन्दर घुसते हैं।**]

मुंशी . (**गंभीर स्वर में**) कहिए! किससे मिलना है?

धरम : (**लापरवाही से**) जिनसे मिलना था, मिल चुका। आप कौन?

मुंशी : खैरातीलाल! वकील साहब का मुंशी।

धरम : ओ! अच्छा हुआ, आप आ गये। वकील साहब आपकी राह देख रहे थे।

मुंशी : आपका नाम? काम, वगैरह?

धरम : मैं लाला धरमदास कान्ट्रेक्टर! (**रुककर**) और आपने अपना नाम क्या बतलाया?

मुंशी : (**मुंह बिचकाकर**) खैरातीलाल !

धरम : (**हँसकर**) क्या नाम है ? माफ कीजिए, क्या आपके नाम का आपकी हरकतों से कुछ ताल्लुक है ?

मुंशी : (**चिढ़कर**) अपने नाम पर से सोच लीजिए कि आपमें कितना धरम है ।

धरम . (**अचानक गंभीर होकर**) आपको बात करने की तमीज नहीं ।

अरूप (**प्रवेश करते हुए**) चलिए धरमदास जी ! (**मुंशी जी की मुद्रा देखकर**) अच्छा हुआ, आप लौट आए। मैं ज़रा वर्मा जी के घर तक जा रहा हूँ।

मुंशी जल्दी आइएगा। मधु दीदी की सहेली आ रही है आपसे मिलने।

अरूप तो आप उनसे मिल लीजिएगा। मैंने तो मधु से कह दिया था मैं अभी उनसे नहीं मिलूँगा, इसके बाद भी वे क्यों आ रही हैं। (**रुककर**) अभी मुझे ज़रूरी काम है। बाकी लोगों को तो ग्यारह के बाद ही बुलाया है न ?

मुंशी : जी हाँ—पर मधु दीदी की सहेली का काम भी ज़रूरी है। अगर आप.....

धरम : (**बीच में**) वकील साहब आपके मुंशी जी को बात करने की तमीज़ है ही नहीं। अगर मेरा कोई नौकर इस तरह मुझसे बातें करे तो मैं उसे खड़े-खड़े निकाल बाहर करूँ।

अरूप : (**हँसकर**) नौकरों को तो मैं भी निकाल सकता हूँ पर ये तो मेरे मालिक हैं। (**घूमकर**) आइए, धरमदास जी, चलें।... हाँ और देखिए मुंशी जी जहाँ तक बने मधु की सहेली को आप ही समझा लीजिएगा।

[अरूप दरवाजे की तरफ़ बढ़ते हैं। मुंशी चश्मा उतार कर मुस्कुराकर धरमदास को देखते हैं। धरमदास मुँह फेरकर

बैसाखी के सहारे बाहर निकल जाते हैं। मुंशी जी खिड़की से बाहर झांकते हैं जैसे उन्हें जाता देख रहे हों। उसके बाद सांस लेकर घूमते हैं। दूर मोटर का हॉर्न बजता है—और भीतर से माधवी जल्दी में प्रवेश करती है।]

माधवी : मुंशी जी, भैया कहाँ गए ? कब आयेंगे ? आपने उन्हें बतलाया नहीं.....?

मुंशी : रुकिए तो ! आप तो एक पर एक सवाल लादे जा रही हैं। मुझे जवाब भी तो देने दीजिए ! **(रुककर)** पहिला सवाल—कहाँ गए। भैया एक मुवक्किल के साथ वर्मा जी के घर गए हैं। दूसरा सवाल.....

माधवी : **(चिढ़कर)** आपको मालूम था, आपही बुलाने भी गए थे। गाथा आ रही है। आपने भैया से कहा क्यों नहीं।

मुंशी : आप कैसे कह रही हैं कि मैंने नहीं कहा। आपने भी तो कहा था। उन्होंने जो उत्तर आपको दिया था, वही मुझे भी दिया। **(रुककर)** वे आपकी सहेली से नहीं मिलना चाहते। **(गर्व से)** मुझसे कहा है कि उनकी सारी बातें मैं ही सुन लूं.....।

माधवी : **(चिढ़े स्वर में)** आप कब से वकील हो गये ?

मुंशी : ये सवाल आपको भैया से करना चाहिए ! **(हँसकर अपनी टेबल पर जमते हुए)** और गुस्से में आप यह पूछना तो भूल ही गई कि आपकी गाथा आएँगी या नहीं ? और अगर आएगी तो.....

माधवी : **(शांत होकर)** हाँ, कब तक आएगी गाथा ? आपके साथ क्यों नहीं आई ?

मुंशी : **(टाइपराइटर पर काग़ज चढ़ाते हुए)** आती ही होगी। दूसरे सवाल का जवाब गाथा देवी से ही ले लीजिएगा। **(माधवी को देखकर)** आप कुछ देर अपनी लता देखिए या

इस खिड़की से रास्ते में आँखें बिछाइए, वे बस आती ही होंगी। मैं तब तक दो ज़रूरी दावे टाइप कर लेता हूँ।

[मुंशी जी टाइपराइटर पर जुटते हैं। माधवी भीतरी खिड़की से झांककर बाहरी खिड़की की ओर जाती है। इसी समय बाहर के दरवाज़े पर एक भयभीत चीख और 'मधु' सुनाई देता है! मुंशी जी और माधवी चौंककर उस ओर देखते हैं—उसी समय अस्त-व्यस्त मुद्रा में तेज़ी से गाथा प्रवेश करती है और दौड़कर माधवी से लिपट जाती है]

गाथा : (भयभीत मुद्रा में—बाहरी दरवाज़े की ओर संकेतकर).....कु.....कुता.....।

माधवी : (अचानक हँसकर).....ओ! कुत्ता है। और मैं समझी, कोई बदमाश है।

मुंशी : (सांस लेकर) कोई बदमाश कुत्ता होगा। (मुंशी जी टाइपराइटर की ओर झुकते हैं।)

गाथा : (स्वस्थ होते हुए) मधु, बड़ा भयानक था....काला...काला... वह पीछे दौड़ा और मैं डरकर भागी।....भूंकता तो मैं सँभल जाती।

माधवी : (हँसकर) दौड़ा, नहीं, दौड़ी! मैं पहिचान गई उसे, वह मेरी पद्मा की माँ है। जब से पद्मा मेरे घर में आई है तब से रोज ही वह किसी न किसी आने वाले के साथ यह हरकत करती है।

गाथा : (आश्चर्य से) पद्मा....?

माधवी : (गर्व से) हूँ! मेरी सुन्दर नन्ही सी कुतिया। दिखलाऊँगी तुम्हें। जिसने चुपचाप तुम्हारा पीछा किया था, वह मेरी पद्मा की माँ है। वह भूंकती नहीं सिर्फ पीछा करती है।

मुंशी : (दार्शनिकता का अभिनय करते हुए) पर आज का ज़माना तो चाहता है कि भूँको अधिक चाहे काटो न।

माधवी : (**शरारत से**) बस यहीं तो आदमी और कुत्ते का अन्तर साफ दिखाई देता है मुंशी जी ! (**घूमकर**)....पर अगर तुम सीधी सड़क से आती तो इसके चक्कर में न पड़ती। गली से आई होगी—सड़क की तरफ़ तो मैं देख रही थी।

गाथा : मैं पिछली गली से ही आई। मधु, मैं सड़कों की भाग-दौड़ से डरती हूँ ! कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि इन सड़कों पर हमारे जीवन की कोई बिसात नहीं ।

माधवी : सड़कों पर तेज़ी से भागती मोटरें देखकर तो मैं भी काँप उठती हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि इस तरह भाग-दौड़कर जो कुछ मिनिट बचाए जाते हैं उनमें कितनी शांति मिल पाती होगी । (**रुककर**) इन तेज़ चीज़ों को मैंने जीवन की शाँति लेते ही देखा है।

गाथा : (**खोई सी**) सच कहती हो मधु ! ये तेज़ सवारियाँ, ये मोटरें जीवन को अशान्त बनाने के सिवा और कर ही क्या सकती हैं। (**क्षणिक शांति होती है और केवल टाइपराइटर तेजी से भागता है और अचानक रुक जाता है**) ।

मुंशी : (**टाइपराइटर छोड़कर**) गाथा जी, हमारे भैया को तो एक मोटर एक्सीडेन्ट ने ही बर्बाद किया है । एक ज़माना था उनकी ख़ूबसूरती के चर्चे हुआ करते थे । इस एक्सीडेन्ट ने उनकी सुन्दरता ही नहीं, उनसे समाज तक छीन लिया । (**रुककर**) सुप्रीम कोर्ट तक फैली प्रेक्टिस सिमटकर चेम्बर में आ गई।

गाथा : कैसे हुआ था एक्सीडेन्ट ?

मुंशी : मैं कहता हूँ कि जान-बूझकर कराया गया था। (**रुककर**) हज़ार मुँह हज़ार बातें, पर मैं कहता हूँ—यह काम किसी जलने वाले का था।

माधवी : (**रोकते हुए**) मुंशी जी.....!

मुंशी : मैं सब कुछ समझता हूँ। यह भी जानता हूँ कि भैया को मेरी बात पर भरोसा नहीं। वे अपने हठ के सामने मेरी नहीं चलने देते। फिर भी मेरा दावा है कि उनकी प्रेक्टिस से जलने वाले किसी वकील ने यह एक्सीडेन्ट कराया था।

गाथा : मुंशी जी, यदि आपको अपनी बात पर इतना अधिक भरोसा है तो आप खुद ही इस बात को अदालत तक क्यों नहीं पहुँचाते। आपका तो काम ही यही है। दुनियाभर के लिए आप इतना करते हैं और अपने लिए करने में हिचक रहे हैं आप। (**रुककर**) जिसका हठ है उसे उसी के साथ रहने दीजिए, पर अपना कर्तव्य तो अपने साथ रखिए। (**माधवी से**) मधु हो सका तो मैं भी तुम्हारे भैया से कहूँगी..... पर वे हैं कहाँ.....? **(माधवी और मुंशी जी एक दूसरे को देखकर सिर झुका लेते हैं। मुंशी जी काम की आड़ ले लेते हैं। माधवी कुछ स्वस्थ होकर सिर उठाती है।)**

माधवी : एक साहब उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें खींच ले गए। कह नहीं सकती कब लौटते हैं। (**कुछ झेंपकर**) क्या करूँ, जाते समय उनसे मिल ही नही पाई। पर वे चाहते है कि लोग पहिले मुंशी जी से बातें करें।

गाथा : तो फिर कभी मिल लूँगी उनसे।

मुंशी : अभी तो आप अपनी सारी बातें मुझसे कह जाइए। (**माधवी को देखकर**) वे यही तो कह गए हैं।

गाथा : (**कुछ आश्चर्य से**) आपसे? मेरा मतलब है आप मेरी समस्याएँ सुलझा सकेंगे।

मुंशी : आपको शक क्यों हो रहा है। आप शायद यह नहीं जानतीं कि बड़े-बड़े वकीलों की सफलता का रहस्य उनके मुंशी ही होते हैं। आप कहिए तो। (**कनखियों से माधवी को देखकर**) ठीक है न, मधु दीदी!

माधवी : (**हँसकर**) अपनी तारीफ़ का एक मौक़ा तो मिल ही गया आपको। (**गाथा से**) मोटी-मोटी बातें पूछ लो गाथा। (**शरारत से**) मुंशी जी, अपने दिमाग़ की तरह जो बातें हैं, उन्हें ही समझा सकेंगे।

[**मुंशी जी मुँह बनाकर टेबल के कागज उलटने लगते हैं।**]

गाथा : एक-दो बातें ही पूछना है अभी तो। बाकी फिर पूछूंगी।

मुंशी : (**उत्सुक होकर**) पूछिए।

गाथा : यदि आदमी की मृत्यु के दो साल बाद यह पता चले कि उसकी मृत्यु स्वाभाविक नहीं थी, वरन् किसी ने उसका खून किया था तो क्या पुलिस ऐसे केस की खोज-बीन कर सकती है।

मुंशी : ज़रूर कर सकती है। पर गवाही चाहिए और कुछ सबूत भी।

गाथा : केवल गवाही से काम नहीं चलेगा ?

मुंशी : ज़रा मुश्किल है। बात ये है कि आजकल गवाही देना भी एक पेशा हो गया है। मैं तो रोज ही देखता हूँ, गवाह खरीदे जाते हैं। सच मानिए, आजकल कुछ पेशेवर गवाह भी हैं, जो हर मुक़दमे में कसम खाकर सच बोलने का नाटक कर जाते हैं।

गाथा : हूँ। अर्थात् प्रमाण बहुत आवश्यक है। (**रुककर**) और फिर जब बात दो साल पुरानी है।

मुंशी : जी हाँ! अगर ज़रा सा सबूत भी मिल गया तो फिर देखिएगा, हमारे वकील साहब का कमाल। मजाल है मुक़दमा हलका पड़ जाए।

गाथा : (**सोचते हुए**) ठीक! अभी तो इतना ही पूछना है। बाद में कुछ और पूछूंगी।

[**गाथा माधवी की ओर शून्य दृष्टि से देखती है। मुंशी जी आलमारी से पुस्तकें निकालने लगते हैं।**]

माधवी : मुंशी जी, अब आप ये बोझा बाद में तौलिएगा। जरा बाहर घूम आइए। हम लोग यहीं बैठकर कुछ अपनी बातें करेंगी।

मुंशी : मैं तो एक ओर बैठा हूँ।

(गाथा मुस्कुराती है और बाहरी खिड़की की ओर बढ़ जाती है।)

माधवी : बातें कोर्ट में बनाइएगा। अभी जाइए।

मुंशी : **(उठते हुए)** यदि आप यह चाहती हैं तो मैं भी यही चाहूँगा **(प्रस्थान)**

[माधवी घूमती है और खिड़की में से बाहर एक-टक ताकती गाथा को देखकर ठिठक जाती है।]

माधवी : खिड़की से राहगीरों को गिना जा रहा है क्या ?

गाथा : नहीं मधु ! मैं सोच रही हूँ कि चलते हैं आदमी और कहा जाता है कि सड़क चल रही है। **(घूमकर)** ठीक वैसे ही जैसे बदलते हैं आदमी और कहा जाता है कि दुनिया बदल रही है।

माधवी : हूँ ! अभी कोर्ट और केस की बात लिए थीं और अभी ये दर्शन कहाँ से घुस गया मस्तिष्क में ?

गाथा : दर्शन नहीं मधु ! इसमें मुझे एक बड़ा सत्य दिख रहा है।

माधवी : छोटी सी बात है। भई कहने का ढंग है बस। **(रुककर)** गाथा इधर मैं देख रही हूँ कि तुम छोटी-छोटी बातों को बड़ी दूर तक खींचने लगी हो।

गाथा : यदि मैं इसे छोटी सी बात मान भी लूँ, तो भी मधु मुझे लगता है कि हर छोटी बात का जीवन में महत्व होता है। **(रुककर)** बाद में वे छोटी-छोटी बातें ही जीवन को रौंद डालती हैं। मैंने अपने जीवन से सीखा है।

माधवी : **(हँसकर)** इतनी सी उमर में इतना बहुत सा सीख गईं। और सीखी भी तो यह मनहूसी। यह राजनीतिकों वाला गंभीरता का नकाब अपने चेहरे पर क्यों लगा लिया। **(कंधे**

पकड़कर झकझोरते हुए) पगली इस सूरत पर यदि हँसी और चंचलता खेले तो देखने वाले पागल हो जायें।

गाथा : (**माधवी के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर**) पर मैं लोगों को पागल नहीं बनाना चाहती। यों ही दुनिया में कम पागल नहीं। (**मुस्कुराने का प्रयत्न करते हुए**) ठीक है न, मधु!

माधवी : (**गुदगुदाते हुए**) इस मुस्कुराहट का मूल्य दूसरे लोग करेंगे, मुझे तो हँसी चाहिए! (**गाथा सहसा हँस पड़ती है। साथ में माधवी भी हँसती है**) बस मैं तो यही चाहती हूँ कि इसी तरह खूब हँसूँ! (**नाचने का अभिनय कर**) और मगन होकर खूब नाचूँ-गाऊँ।

गाथा : तुम्हारे लिए तो मैं भी यही चाहती हूँ मधु! पर मुझसे तो हंसना-गाना छूट सा गया है। मधु (**फ़ोन की घंटी बजती है। गाथा रुक जाती है।**)

माधवी : (**फोन का रिसीवर उठाकर**) हलो! जी.....वकील साहब बाहर गये हैं। पता नहीं.....। (**रिसीवर रखकर**) गाथा मैं तुम्हारी बात नहीं मानती। (**रिवाल्विंग चेयर पर गिरकर उसे घुमाकर**) हर आयु के साथ आयु की आवश्यकता भी होती है। मैं हँसने-खेलने को इस आयु की आवश्यकता मानती हूँ। (**उठकर हँसते हुए गाथा का आंचल खींचकर घूँघट निकाल देती है।**) तुम जैसे विचार वाली लड़की को तो शादी कराकर सास-ननद के पैर दबाने थे। कालेज में कैसे भूल पड़ी? (**हँसी**)

गाथा : (**आंचल ठीक करते हुए**) मधु कभी-कभी समय की पूरी बात माननी होती है।

माधवी : फिर आ गई मनहूसी पर। गाथा तुम्हारी सुन्दरता के लिए मुझे दुःख होता है। तुम हमेशा उसे अपनी इसी मनहूसी से ढाँके रहती हो।

गाथा : और मुझे सबसे अधिक दु:ख यही सुन्दरता देती है मधु! (**सांस लेकर माधवी से दूर होते हुए**) यदि मुझे सुन्दरता का अभिशाप न मिला होता तो शायद मैं अधिक सुखी होती।

माधवी : (**बात बदलने का प्रयत्न करते हुए**) सच कह रही हो या नाटक कर रही हो।

गाथा : नाटक हल्के मन से होता है—भारी मन से नहीं। (**रुककर**) यह बात और है कि भारी मन दूसरों के लिए नाटकीय बन जाये।

माधवी : (**अपनी धुन में**) मैं सच कहती हूँ तुम नाटक अच्छा कर सकती हो। मुझसे तो यह बन ही नहीं सकता। (**हँसकर**) इतनी सुन्दरता के घमंड को इतनी सरलता से दबाना कोई साधारण अभिनय नहीं। कुछ लोग मेरे पास आये थे और चाहते थे कि मैं उनके नाटक में अभिनय करूँ। पर मैंने नाहीं कर दी। (**गाथा के सामने जाकर उसकी ठोड़ी पकड़कर**) सच मानो, वह पार्ट तुम कर सकती हो।

गाथा : (**माधवी का हाथ स्नेह से हटाकर**) यह तुम कैसे कह सकती हो।

माधवी : मैंने वह नाटक पढ़ा है। तुम जिस तरह का व्यवहार कर रही हो उसमें बहुत कुछ वैसा ही अभिनय करना है।

गाथा : अभिनय तो अनुभव की वस्तु है। तुम्हें मुझसे अधिक अनुभव है।

माधवी : (**मुँह बनाकर**) हूँ। मनहूसी से भरा हुआ है चरित्र। मैं तो जैसी हूँ वैसा अभिनय करना चाहती हूँ। उसमें न हँसी है न चंचलता, वह तो आँसुओं और सिसकियों से भरा है। (**हँसकर**) उसमें नाटककार ने भी मूर्खता की है। (**गाथा उत्सुकता से देखती है**) नायिका, मनहूस बनाई है और उसके बाद भी उसे खूब सुन्दर बतलाया है। मैं सोच रही थी उसने तुम्हें कब देख लिया.....।

गाथा : (**झेंपकर**) तो तुम्हें मुझसे चिढ़ है ?

माधवी : (**बात बदलते हुए**) नहीं रो ! ऐसी बात नहीं । उसमें एक बड़ी मूर्खता और है । (**गाथा से आंखें मिलाकर**) वह नायिका विधवा है ।

गाथा : (**चौंककर**) विधवा ।

माधवी : हूँ ! तरुणी, पर विधवा ! इसलिए मैंने तुमसे भी नहीं कहा था । (**मुँह बनाकर**) विधवा ! हुँ, कौन बनेगा ? और मान लो कोई तैयार हो भी गया तो अभिनय में क्या आनन्द आएगा । कितना बँधकर अभिनय करना होगा । (**हँसकर**) नाटककार की कठिनाई भी मैं समझ रही हूँ—उससे प्रेम कराए तो बूढ़ों की गालियाँ खाए और न कराए तो रसिक लोगों की गालियाँ टूटें । (**गाथा की शून्य मुद्रा देखकर**) पर तुम क्यों गुमसुम हो गई ?

गाथा : (**भावों में लीन**) सोच रही हूँ कि क्या विधवा इतनी घृणित होती है । (**रुककर**) तुम्हें शायद घृणा है विधवाओं से ।

माधवी : घृणा तो नहीं, पर उनसे कोई लगाव भी नहीं ही है ।

गाथा : मधु ! लगाव तो तब हो सकता है जब तुम उनके जीवन को पास से देखो । प्रत्येक विधवा स्त्री तो है ही, और हर स्त्री के जीवन में कुछ न कुछ विशेषता होती है ।

माधवी : (**टालते हुए**) विशेषता होती है तो रहे । पर उस विशेषता के कारण उसे समाज में, या सामाजिक नाटक में महत्त्व दिया जाये यह मुझे अच्छा नहीं लगता । (**रुककर**) पर मुझे लग रहा है कि भैया के समान तुम्हें भी विधवाओं से सहानुभूति है ।

गाथा : (**प्रसन्न होकर**) तुम्हारे भैया को विधवाओं से सहानुभूति है ।

माधवी : हूँ । जब कभी किसी भी प्रसंग में विधवाओं की बात आती है तो वे हमेशा विधवाओं का पक्ष लेते हैं ।

गाथा : (**अचानक**) तो फिर मैं उनसे अवश्य मिलूंगी।

माधवी : तुम्हें अपने केस के लिए उनसे मिलना ही है.....(**अटकते हुए**) पर.....वे मिलेंगे या....(**रुककर**) या मुंशी जी से ही मिलने को कहेंगे ....।

गाथा : उनसे मुझे मिलना ही होगा । (**रुककर**) तुम्हें मेरी सहायता करनी होगी मधु ! (**अचानक मोटर का हार्न सुनाई देता है । गाथा बाहर की खिड़की की ओर बढ़ती है**) कोई यहाँ आया क्या.....या तुम्हारे भैया.....(**बाहर देखते हुए**) पर यह तो किसी मोटर का ड्राइवर मालूम हो रहा है । इसी तरफ आ रहा है ।

माधवी : (**खिड़की से झांककर**) भैया जिस मोटर मे गये थे—वही मोटर लगती है। ड्राइवर कुछ काम से आया होगा।

[**माइकिल खिड़की से दिखता है और गाथा उसे देखकर चौंकती सी है और मुँह अन्दर की ओर फेर लेती है । माइकिल दरवाजे पर आकर पुकारता है ।**]

माइकिल : (**नेपथ्य से**) मुंशी जी, मुंशी जी !

माधवी : (**ऊँचे स्वर में**) अन्दर आ जाओ ।

[**माइकिल का प्रवेश। माइकिल गाथा को देखकर कुछ सहमता है । गाथा भी उसे पहिचानी दृष्टि से देखती है ।**]

माधवी : क्या बात है ?

माइकिल : (**स्वस्थ होकर**) सेठ जी का सिगरेट केस तो नहीं मिला आपको ?

माधवी : यदि यहाँ भूले होते तो मिल ही जाता ।

माइकिल : शायद मुंशी जी को मिला हो ।

माधवी : मिला होगा तो भिजवा दिया जाएगा ।

माइकिल : जी बहुत अच्छा ।

[**माइकिल गाथा पर दबी दृष्टि फेंक कर प्रस्थान करता है। गाथा बाहरी खिड़की के पास आ जाती है।**]

माधवी : (**हँसकर**) क्यों ड्राइवर की ड्रेस भा गई क्या ?

गाथा : (**चौंककर हँसने का प्रयत्न करते हुए**) ऐसा ही समझ लो। (**रुककर बाहर देखते हुए**) मधु मुझे उसकी गाड़ी का नम्बर चाहिए। न जाने क्यों मेरा मन.....

माधवी : (**बीच में**) मन हाथों से जा रहा है। (**हँसकर**) पर मेरी सखी वह ड्राइवर है, गाड़ी का मालिक कोई और है।

गाथा : (**अचानक बाहर के दरवाज़े की ओर बढ़ते हुए**) मैं जानती हूँ मधु ! सच, मुझे इस गाड़ी का नम्बर नोट करना ही होगा। मैं चलती हूँ.....।

माधवी (**आश्चर्य से**) अरे अरे ये क्या पागलपन है। सुनो, कहीं तुम्हारे पहुँचने तक गाड़ी चल न दे।

गाथा : इसीलिए तो जल्दी कर रही हूँ। तुम इसे पागलपन समझकर अभी मुझे क्षमा कर देना.....।

[**गाथा तेज़ी से दरवाज़े के बाहर हो जाती है। माधवी पहिले दरवाज़े तक आती है और फिर भाग कर खिड़की के पास आ खड़ी होती है और पर्दा गिरता है।**]

द्वितीय अंक

[कुछ दिनों बाद ! अरूप बिहारी का वही आफिस ! घड़ी में दस बजकर कुछ मिनिट हुए हैं। माधवी और गाथा आफिस में हैं। माधवी रिवाल्विंग चेयर के सहारे फ़ोन का रिसीवर लिए खड़ी है। गाथा उत्सुकता से देख रही है।]

माधवी : (**फ़ोन पर**) हलो.....कौन चौधरी साहब के मुंशी !..... देखिए मुंशी जी मैं अरूप बिहारी की बहिन बोल रही हूँ..... जी.....वे हैं क्या वहाँ....? नहीं हैं..... ! अच्छा जी ! (**डिसकनेक्ट कर फिर डायल करती है**) मैं अरूप बिहारी के घर से बोल रही हूँ.....वहाँ वे आये हैं ?....कई दिनों से नहीं आए.....थैंक यू ! (**रिसीवर रखकर**) गाथा, समझ में नहीं आता कहाँ चल दिये भैया !

गाथा : तुमने आज तो समय ले लिया था उनसे ?

माधवी : (**अटपटाते हुए**) तुम्हारे आने का समय तो बतला दिया था.... शायद इसीलिए.....!

गाथा : (**साँस लेकर**) तो तुम्हारे भैया मुझसे इतने भागते हैं। (**बगीचे की ओर की खिड़की की ओर बढ़ते हुए**) मेरा दुर्भाग्य !

माधवी : (**गाथा की ओर बढ़ते हुए**) तुमसे नहीं गाथा, तुम्हारी सुन्दरता से भागते हैं। (**स्नेह से**) गाथा बुरा न मानना, मैंने तुमसे कहा था न कि जब से उन्होंने सुन्दरता खोयी है, वे हर सुन्दर वस्तु से भागते हैं ।

गाथा : (**आँचल का छोर उंगलियों में उलझाते हुए**) यदि मैं सुन्दर हूँ भी, तो उसमें मेरा क्या अपराध ? (**भावविभोर होकर**) सच कहती हूँ मधु मुझे यह सुन्दरता खलने लगी है। (**रुककर**) जो सुन्दरता को अभिशाय माने उससे तो तुम्हारे भैया को घृणा नहीं करना चाहिए, (**खिड़की से झूलती लता को दुलारती हुई**) सौन्दर्य पाना या खोना अपने हाथ नहीं, पर उसका भक्त होना या न होना तो अपने ऊपर है।

माधवी : मैं तो मानती हूँ कि तुम्हें अपने सौन्दर्य का घमंड नहीं, तुम उसकी भक्त भी नहीं; पर भैया के मन में यह विश्वास कैसे जमे ?

गाथा : मधु, उनसे मेरी उलझनों की कहानी कहना। (**रुकते हुए**) संभव है उन्हें मुझसे सहानुभूति हो जाए। (**भरे गले से**) अपनी सीमायें लिए.....मैं इस अनजाने नगर में और किसके पास जाऊँ ?

माधवी : (**गाथा को स्नेह से समेटकर**) मेरी गाथा ! मैं वचन देती हूँ, तुम्हारा काम कराकर रहूँगी। (**दूर हटते हुए—गाथा के चेहरे में आँखें गड़ाकर**) पर मैं तुम्हारी समस्या पूरी तरह समझी नहीं। तुम भी तो साफ-साफ बतलाती नहीं। (**रुककर**) भैया से कहूँगी क्या ?

गाथा : जिनसे मुझे स्नेह मिला है, उनसे मैंने छिपाना नहीं सीखा। (**रुककर**) समय आने पर सब कुछ बतला दूँगी। मेरे केस की बात में मेरी बात भी सामने आ जायेगी। (**बाहर की तरफ देखकर**) उस दिन कार का नम्बर भी मैंने ले लिया था, उससे मेरे पक्ष को बल मिलेगा।

माधवी : (**आश्चर्य से**) उस दिन तुमने नम्बर नोट कर ही लिया था। (**गाथा सिर हिलाकर सहमति प्रकट करती है**) तो मुंशी जी

से अभी और बातें कर लेना फिर मैं और मुंशी जी भैया से बातें करेंगे। उसके बाद मैं भैया का यह हठ तोड़ दूँगी—वे तुमसे मिलेंगे (**मुस्कुराकर**) और जब मिलेंगे तब पछतायेंगे कि पहिले ही क्यों न मिले।

गाथा : (**स्नेह से ढकेलकर**) शरारत तो तुम्हारी रग-रग में बसी है।

माधवी : (**हँसकर**) शरारत! शरारत तो तुम में अधिक है। उसी के सहारे तुम अपने मन का रहस्य छिपा रही हो। ठीक है न?

गाथा : (**गंभीर होकर**) मेरे मन का रहस्य मधु! मेरे मन का ऐसा कोई रहस्य नहीं.....हाँ.....रहस्य है जो (**अचानक रुक जाती है**)।

माधवी : (**गाथा के दोनों हाथ पकड़कर उसे घुमाती हुई**) रहस्य मन में नहीं तो कहाँ है? (**हँसकर**) या मन ही नहीं रह गया है। (**बनावटी गंभीरता से**) मन जब मनमानी करने लगता है तो ऐसा अक्सर होता है। पर इसे मेरा अनुभव मत समझ लेना (**हँसकर**) मैंने दूसरों से सुना है।

गाथा : (**अपनी धुन में**) मधु रहस्य मन का नहीं जीवन का है। (**रुककर**) पर अभी उसे रहस्य ही रहने दो—कुछ दिन और!

माधवी : (**गाथा को खुश करने की कोशिश करते हुए**) लो माने लेती हूँ तुम्हारी बात। (**बनावटी गंभीरता से**) अच्छा है, पहिले भैया हो जाने दो रहस्य।

गाथा : जो मेरे जीवन से दूर भागता है वह जीवन में रहस्य जानने कैसे आएगा?

[**मोटर का हार्न सुनाई पड़ता है। गाथा चौंक पड़ती है और घबराकर खिड़की की ओर देखने लगती है।**]

माधवी : (**खिड़की की ओर देखकर**) भैया इस कार से नहीं गये, और न इससे आयेंगे ही।

गाथा : (**अनोखे भावों में**) मधु उनसे कह दो कि कार से दूर रहा करें। बुरी चीज़ है।

माधवी : उल्टी बात कर रही हो। भय तो उन्हें रहता है जो पैदल चलते हैं, कार पर बैठने वालों को भय कैसा ? (**रुककर**) जिस दिन भैया का एक्सीडेन्ट हुआ था उस दिन भैया कोर्ट से पैदल ही आ रहे थे।

गाथा : (**अचानक**) हाँ, उस दिन वे पैदल ही आ रहे थे।

माधवी : (**आश्चर्य से**) तुम्हें कैसे मालूम ?

गाथा : (**सँभलकर**) पैदल. ....हाँ पैदल ही तो आ रहे थे। मुंशी जी ने मुझे बतलाया था। शहरों की भीड़-भाड़, उनके बीच नयी-नयी तेज़ भागती मोटरें और उन पर नये-नये ड्राइवर.....हर पैदल चलने वाले के लिए भय की बात है। (**कॉलबेल बजती है--गाथा चुप हो जाती है।**)

माधवी : (**दरवाज़े की ओर बढ़कर**) कौन है (**रुककर**) आ जाइए !

भूषण : (**प्रवेश करते हुए**) वकील साहब से मिलना....(**गाथा को देख कर अचानक रुक जाते हैं। गाथा भी उन्हें देखकर सहम जाती है। माधवी दोनों के भाव पढ़ने का प्रयत्न करती है**) ग...गा....।... था..... यहाँ.....वकील के घर.....।

माधवी : (**बीच में**) जी नहीं। वकील के घर नहीं। अपनी सखी के घर।

गाथा : (**कुछ घबराकर**) हाँ....ाँ....सखी के घर.....पर तुम.....?

माधवी : (**हँसकर**) ओ ! ये बात है---मैं समझ गई। तो आप दोनों एक दूसरे से परिचित हैं। (**गाथा को धीरे से धक्का देकर**) यही जीवन का रहस्य छिपा रही थीं मुझसे ! पगली....!

गाथा : (**रोकते हुए**) नहीं मधु ! ये मेरे ही शहर के हैं..... बस !

माधवी : (**मुस्कुराते हुए**) अब नहीं छल सकोगी मुझे (**रुककर**) पहिले ही कह देती तो अच्छा होता, मैं भैया का प्रसंग ही न चलाती। (**भूषण से**) आप इस घर को इनका ही समझिये। (**हँसकर**) दिल भर कर मिलिए (**अन्दर की ओर बढ़ते हुए**) सुख-दुख की चर्चा कीजिए तब तक भैया आ ही जायेंगे।

गाथा : (**माधवी के पीछे चलते हुए**) मधु, तुम मत जाओ। रुको।

भूषण : (**मस्ती से**) उन्हें जाने दो गाथा !

माधवी : (**हँसती हुई दरवाजे से भीतर जाती हुई**) सखियों से शर्माना, छिपाना ठीक नहीं—आप इसे समझा दीजिएगा। [**माधवी का प्रस्थान। गाथा का चेहरा तमतमा उठता है—वह माधवी के जाते ही भूषण की ओर घूमती है।**]

गाथा : तुम यहाँ कैसे आए ?

भूषण : (**शरारत से**) तुम सवारी के बारे में तो नहीं पूछ रही हो न ! (**हँसकर**) यों आया मैं रेल से, मोटर से नहीं।

गाथा : भूषण यह दूसरे का घर है। कुछ ऐसा न करो कि मैं तुम्हारा अपमान कर बैठूं।

भूषण : (**सिगरेट निकालते हुए**) तुमने मेरा मान किया कब है जो अब आशा करूँ। (**सिगरेट जलाते हुए**) डरने की बात तो अब मन में आती ही नहीं।

गाथा : (**दबे स्वर में**) पर तुम आये क्यों ?

भूषण : (**कश खींचते हुए**) अपनों से मिलने के लिए किसी भी बहाने की आवश्यकता नहीं। मिलना ही सबसे बड़ा काम है।

गाथा : मैं नहीं मानती। कोई स्वार्थ ही तुम्हें लाया होगा। [**खिड़की के पास आकर बाहर देखने लगती है।**]

भूषण : (**गाथा के पास आकर**) कभी तो गहराई तक पहुँचने की कोशिश करो गाथा !

गाथा : (**कुछ चिढ़कर**) भूषण तुम जानते हो कि मुझे इन बातों से चिढ़ है।

भूषण : (**सिगरेट की राख झाड़ते हुए**) तुम्हें तो बहुत-सी बातों से चिढ़ है, मैं जानता हूँ; पर मुझे तो नहीं है। (**कश खींचकर हँसते हुए**) समझीं (**ज़ोर देकर**) कुमारी गाथा जी! तुम जिस रास्ते से आई हो उसकी ओर देखना भी नहीं चाहती और मैं आगे तभी बढ़ता हूँ जब पुराना रास्ता मुड़कर देख लेता हूँ। तुम अपने ही सत्य से चिढ़ती हो पर मैं....

गाथा : (**बात काटकर**) भूषण! अब तो जी लेने दो मुझे।

भूषण : (**मस्ती से**) मैं कौन होता हूँ रोकने वाला! (**रुककर**) आठ-दिन हो गये यहाँ आये और इस बीच कई बार तुम्हारे कालेज़ हो आया। (**हँसकर**) वहाँ मुझे पता लग गया कि तुम कैसे जी रही हो।

गाथा : पता नहीं क्या पता लगा तुम्हें।

भूषण : (**व्यंग्य से**) यही कि कालेज़ के लड़के तुम्हारे नाम की माला जपते हैं। चाहते हैं कि हर तरफ तुमही तुम दिखो। (**सिगरेट खिड़की से फेंककर दूसरी जलाते हुए**) कुछ बेचारे ऐसे भी मिले जो तुम्हारी लगाई ठंडी आग में झुलस रहे हैं।

गाथा : (**अरूप की टेबल की ओर बढ़ते हुए**) तो मैं क्या करूँ? उन पर मेरा क्या अधिकार?

भूषण : (**गाथा की ओर घूमकर**) उन पर तुम्हारा अधिकार नहीं, मैं जानता हूँ। पर स्वयं पर तो तुम्हारा अधिकार है। (**रुककर**) और शायद उसी अधिकार के कारण तुमने अपने कुँवारेपन का.....

गाथा : (**व्यथित होकर**) भूषण! रुक जाओ भूषण! (**तेज़ साँस**

लेते हुए) यह क्यों भूलते हो कि मैं अपनी सखी के घर में हूँ। ऐसी सखी के घर में जो मेरा मान करती है।

भूषण : (**व्यंग्य से**) सखी तो अपनी है और अपनों से सच छिपाने को पाप कहा गया है। मुझे तुम्हारी समझ पर दया आ रही है।

गाथा : भूषण मुझे तुम्हारी दया नहीं चाहिए, सहानुभूति भी नहीं चाहिए (**रुककर**) मुझे तो तुम्हारी घृणा और तुम्हारा तिरस्कार ही जिला सकता है। (**घूमकर**) जीकर कुछ पढ़ना चाहती हूँ।

भूषण : मैं भी चाहता हूँ कि तुम पढ़ो। (**गाथा भूषण की ओर देखती है**) पर केवल किताबों से नहीं; अनुभवों से भी।

गाथा : अनुभवों से ही तो अधिक पढ़ रही हूँ।

भूषण : (**कश खींचते हुए**) यदि अनुभवों से तुमने अधिक पढ़ा होता तो तुम अब तक बदल गई होतीं। (**रुककर**) मुझे लगता है कि तुम कुछ चुने हुए अंश ही पढ़ रही हो। पर याद रखो यह किताबी पढ़ाई नहीं है। असफलता ही फिर हाथ आयेगी।

गाथा : (**दबे स्वर में**) आने दो। जितना पढ़ रही हूँ उसके कारण विद्यार्थियों को पढ़ाने योग्य तो हो ही जाऊँगी (**रुककर**) मुझे सिर्फ मास्टरी ही करना है।

भूषण : विद्यार्थियों को पढ़ा लोगी, यह मानता हूँ। पर अपने आपको पढ़ाना कठिन हो जायेगा गाथा! (**अन्दर के दरवाजे से झाँकते हुए**) यह किताबी भावुकता बहुत दुःख देगी।

गाथा : (**अस्फुट स्वरों में**) जो दुःख अभी पा रही हूँ उससे और अधिक दुःख क्या होगा?

भूषण : (**तेजी से घूमकर**) अभी क्या दुःख है तुम्हें! जो दुःख था वह तो कट गया।

गाथा : (**व्यथित स्वर में**) बड़े कठोर हो भूषण, तुम मेरी एक दुर्बलता का लाभ उठाकर मेरे मन को निचोड़े ही जा रहे हो।

भूषण : सच कह रहा हूँ गाथा ! (**सिगरेट का टोंटा पटककर पैरों से कुचलते हुए**) जिसे तुम दुःख समझ रही हो वह तुम्हारी मूर्खता है। दुःख का सामना तो उस दिन करना होगा जिस दिन गाथा को लोग पहिचान लेंगे। ये मान-सम्मान, प्रेमियों के ये मेले, सुन्दरता का यह संगीत—सब एक साथ समाप्त हो जाएगा।

गाथा : (**शीघ्रता से**) मैं उस दिन के लिए तैयार हूँ भूषण।

भूषण : (**कुछ ऊँचे स्वर में**) तुम उस दिन के लिए तैयार नहीं हो गाथा।

गाथा : (**भीतरी खिड़की से झाँककर याचना भरे स्वर में**) धीरे बोलो भूषण !

भूषण : (**हँसकर**) यदि उस दिन के लिए तैयार हो तो यह डर क्यों ? यह सारा नाटक क्यों ? (**चढ़ाते स्वर में**) रहस्यों को ढाँकने के लिए इतनी व्याकुलता क्यों ?

गाथा : (**धीमे स्वर में**) मैं देवी नहीं हूँ भूषण !

भूषण : तभी तो कहता हूँ कि पूरी स्त्री बन जाओ। (**गाथा के पास जाकर**) गाथा तुम सिद्धान्तों की भक्त होती जा रही हो, उन सिद्धान्तों की जो सुन्दर काग़ज़ की पुस्तक पर जीते हैं और जीवन के धरातल पर आकर दम तोड़ देते हैं। तुम समझकर भी आदर्श और हठ में अपनी इच्छाएँ दबा रही हो। मैं जानता हूँ तुम कुढ़न में जी रही हो।

गाथा : (**रक्षा करती हुई**) तुम झूठ कह रहे हो।

भूषण : (**ऊँचे स्वर में**) तो सच तुम कह दो। (**गाथा की शून्य मुद्रा देखकर**) गाथा तुम स्वयं को धोखा दे रही हो और यह धोखा तुम्हें भटका देगा।

गाथा : (**साहस से**) मैं नहीं भटकूंगी—इतना साहस है मुझमें।

भूषण : (**व्यंग्य भरे ऊँचे स्वर में**) जिस दिन तुम्हारा रहस्यमय

व्यक्तित्व ललकारा जायेगा उस दिन तुम्हारा साहस टूट जायेगा। (**चढ़ते स्वर में**) जिस दिन तुम्हारा नारीत्व रौंदा जाएगा उस दिन जीवन का नया चित्र तुम्हारे सामने आएगा। (**तेजी से**) तुम रोओगी, याचना करोगी और तुम्हारे ये सारे भक्त भी तुम पर हँसेंगे।

गाथा : (**घबराकर यहाँ-वहाँ देखती हुई**) बस करो, बस करो भूषण !

भूषण : (**उसी स्वर में**) मेरे रुक जाने से तो समय की विषमताएँ रुकेंगी नहीं। गाथा, तुम कच्चे धागों का झूला डालकर जीवन की पेंग मारना चाहती हो ! गिरोगी.....गिरोगी मुँह के बल गिरोगी (**अट्टहास**).....जरूर गिरोगी.....।

गाथा : (**एक हाथ से मुँह ढाँक कर दूसरे से दरवाजे की ओर संकेत कर**) चले जाओ, चले जाओ भूषण (**चढ़ते स्वर में**) जाओ वर्ना मैं पागल हो जाऊँगी (**उतरते स्वर में**) मैं पागल हो जाऊँगी भूषण !

भूषण : (**व्यंग्य भरे स्वर में**) जहाँ तक मैं जानता हूँ अभी तक यह घर तुम्हारा तो नहीं हुआ जो यहाँ तुम्हारी आज्ञा मान लूँ। हाँ, अगर इसे ही अपना घर बना लोगी तो देखा जाएगा। (**रुककर**) सुना है तुम्हारी सखी के भाई अभी उम्मीदवार ही हैं (**हँसी**)।

[अचानक अन्दर के दरवाजे से माधवी प्रवेश करती है। चेहरे पर कुछ घबराहट है। माधवी को देखते ही गाथा सहम जाती है और भूषण अचकचाकर मुद्रा बदलने का प्रयत्न करते हैं।]

माधवी : क्षमा करना गाथा, मैं कुसमय आ गई। क्या करूँ यहाँ की हँसी अन्दर तक सुनाई पड़ी.....बड़ी अनोखी हँसी थी—मेरा मन न माना।

भूषण : देखिए मैं जब खुलकर हँसता हूँ, तो इसी तरह हँसता हूँ। (**मुंशी जी बाहर के दरवाजे से प्रवेश करते हैं**) क्या करूँ मेरी हँसी कुछ अजीब है।

मुंशी : अजी, क्या हँसी है आपकी। बाहर चाय पी रहा था, हाथ से प्याला छूट गया। (**भूषण मुस्कुराने की कोशिश करता है—और गाथा माधवी के पास सरक आती है।**) रामलीला में दशकंधर की हँसी सुनी थी—कुछ ऐसी ही थी, उसके बाद ये आपकी हँसी सुनी ! (**मुँह बनाकर**) कुछ लोग रोते बड़े भद्दे ढंग से हैं पर हँसने की तो एक तमीज़ होती ही है। (**भूषण का चेहरा विकृत हो जाता है**)।

गाथा : मधु ! मेरा सिर चकरा रहा है। मैं अन्दर चलूँगी।

माधवी : (**शरारत से मुस्कुराकर भूषण की ओर देखती है। भूषण झेंपने का अभिनय करते हैं।**) ऐसे में सिर चकराने की बात सुनी भर थी, देखी आज। आओ चलें ! (**भूषण से**) आप भैया के आने तक मुंशी जी से उलझिये।

[**माधवी गाथा का हाथ पकड़े, खींचती-हँसती प्रस्थान करती है। भूषण और मुंशी जी उस ओर देखते हैं। मुंशी जी शीघ्र ही दृष्टि हटा लेते हैं पर भूषण की दृष्टि वहीं जमी रहती है।**]

मुंशी : उधर बहुत देख चुके, अब इधर देखिए। (**खाँसकर अपने कोट के बटन ठीक करते हैं।**) और देखिए अब इस ऑफिस में इस तरह की हँसी न आने पाये।

भूषण : मुंशी जी, हँसी का कारण होता है। (**व्यंग्य से**) आपके सामने क्या खाकर हँसूँगा ! (**सिगरेट निकालते हुए**) वकील साहब कब आयेंगे ?

[**मुंशी जी इशारे से सिगरेट का पैकेट माँगकर एक सिगरेट लेते हैं। बड़े दुखी मन से वे पैकेट लौटाते हैं। भूषण अपनी और मुंशी जी को सिगरेट सुलगाते हैं।**]

मुंशी : (**सिगरेट पर निगाह जमाये**) कुछ कह नहीं गये कब आयेंगे। वैसे इस समय उन्हें घर पर ही रहना चाहिए था।

भूषण : (**कश खींचकर**) कहाँ गये हैं ?

मुंशी : ये भी नहीं मालूम। (**मुट्ठी भर कश खींचकर**) सिगरेट अच्छी पीते हैं आप ! (**मुस्कुराकर दूसरा कश खींचते हैं**)।

भूषण : (**सिगरेट का पैकेट मुंशी जी को देते हुए चालाकी से**) इसे रख लीजिए..... इतनी पसन्द आ गई है तो.....!

मुंशी : (**कुछ हिचकिचाते हुए**) मेरा ये मतलब नहीं था। (**भूषण मुस्कुराकर पैकेट मुंशी जी की ओर बढ़ाते हैं**) पर अगर आप यही चाहते हैं तो मैं आपकी बेइज़्ज़ती कैसे कर सकता हूँ। और फिर आप तो मेहमान भी हैं.....(**पैकेट लेकर जेब में रख लेते हैं।**)

भूषण : (**सिगरेट की राख झाड़ते हुए**) मुंशी जी एक बात बतलाइए। कोई खास बात तो नहीं है फिर भी मैं जानना चाहता हूँ।

मुंशी : (**सिगरेट का मजा लेते हुए**) पूछिये।

भूषण : गाथा देवी वकील साहब से कितनी बार मिलीं ?

मुंशी : (**अपनी धुन में**) वकील साहब किसी सुन्दर चीज़ को पास नहीं आने देते। और गाथा देवी सुन्दर कही जाती हैं। वे वकील साहब की बहिन की सहेली हैं—बस इतनी ही बात है।

भूषण : ओ ! ये बात है ! फिर भी अपनी सहेली के मार्फत उन्होंने कुछ सलाह तो ली ही होगी।

मुंशी : (**ताड़ते हुए**) मुझे तो नहीं मालूम। देखिए भूषण जी, उधर दो सखियाँ इधर बहिन-भाई.....! मैं बीच में कहीं आता ही नहीं। पर आप क्यों इतने उत्सुक हैं ?

भूषण : (**शीघ्रता से**) कुछ नहीं यों ही पूछ रहा था। गाथा को जानता हूँ न, इसीलिए सोच रहा था कि यदि कुछ उनका भी काम होगा तो मैं हो करा लूँगा। मैं तो आता ही हूँ वकील साहब के पास।

मुंशी : (**सिगरेट बुझाकर जेब में रखते हुए**) आप उन्हें कब से जानते हैं ?

भूषण : बचपन से। इनके पिताजी और हम एक ही साथ व्यापार करते हैं।

मुंशी : (**अपनी टेबल पर जमकर टाइपराइटर खोलते हुए**) तो आप उस व्यापार के फायदे का अपना शेयर वसूल करने यहाँ तक आ गये।

भूषण : (**कुछ झेंपकर**) ये बात नहीं। (**सँभलते हुए**) घर की चीज का सौदा मैं बाहर नहीं करता। (**रुककर**) मैं तो अपने केस के सिलसिले में आया था। आप तो जानते हैं मेरी परेशानी। वकील साहब भी नहीं मिलते, तो परेशानी और बढ़ती है।

मुंशी : इधर उनके पास कई ज़रूरी केस आ गये हैं। तीन तो सुप्रीम कोर्ट के हैं। सबके लिए ब्रीफ बनाना और कोर्ट में खड़े होने वाले वकील को सारी बातें समझाना। आप ही बतलाइए समय कैसे मिले।

भूषण : केस तो मेरा भी ज़रूरी है। काफी समय लेगा।

मुंशी : मेरी तो समझ में नहीं आता कि वे अधिक समय देंगे कैसे। हाँ ये हो सकता है कि केस की खास-खास बातें आप मुझे बतला दें। मैं मौक़ा देखकर उनसे बात कर लूँगा। उसके बाद जब भी आप मिलेंगे आपका काम थोड़ी ही देर में हो जायेगा।

भूषण : बात तो आपकी ठीक लग रही है (**अरूप की टेबल पर टिकते हुए**) तो आप काग़ज़ पेंसिल निकालकर लिखना शुरु कीजिए।

मुंशी : जहाँ बात साफ नहीं होगी, माफ कीजिए—वहाँ मैं आपसे पूछे बिना नहीं रहूँगा। क्योंकि वकील साहब भी मुझसे गोल-मोल बातें साफ करने के लिए कहेंगे ही।

भूषण : ठीक ! (**जेब में हाथ डालता है—फिर कुछ याद कर**) मुंशी जी एक सिगरेट दे देते तो कुछ मूड बनता। (**मुंशी जी पैकेट में से एक सिगरेट निकालकर भूषण की ओर फेंकते हैं। सिगरेट कैच कर भूषण सुलगाकर कश खींचता है**) अब कुछ बात जमेगी। हुँ: ! मुंशी जी मुझे एक विधवा के बारे में कुछ पूछना है—ये तो मैं वकील साहब से कह चुका था। अभी मैं उस विधवा के इतिहास को कहानी बनाकर सुनाऊँगा (**कश लेकर धुएँ के छल्ले बनाते हुए**) और उस कहानी के सभी पात्रों के नाम छिपाकर रखूँगा।

मुंशी : इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। काम है घटना का, पात्रों के नाम का नहीं। बाद में आप वकील साहब से पात्रों के नाम कह दीजिएगा।

भूषण : तो मुंशी जी कहानी एक ऐसी लड़की की है जो मोहल्ले, शहर और स्कूल-कालेज में सुन्दरता की परिभाषा मानी जाती थी। चंचल और मुँहफट भी थी। इसके साथ घमंड भी खूब। घर में धन खूब था, इसलिए घमंड सुन्दरता का तो था ही, धन का भी था।

मुंशी : धन के साथ सुन्दरता ! (**नोट करते हुए**) करेला और वो भी नीम चढ़ा, मेरे वकील साहब के शब्दों में !

भूषण : वह चाहती थी कि उसे ऐसा प्रेमी मिले जो अपना व्यक्तित्व उसे पूरी तरह सौंप दे।

[**फ़ोन की घंटी बजती है। भूषण फ़ोन का रिसीवर उठाते हैं।**]

मुंशी : रुकिए, वो काम मेरा है। (**जाकर रिसीवर लेते हुए**) हलो ! मैं मुंशी खैरातीलाल....जी.....जी हाँ ! आई है... काफी देर से आपका इंतज़ार कर रही हैं....और....जी हाँ भूषण जी भी आये है.....यहीं बैठे है। हूँ ! जी....उनसे जाने के लिए कह दूँ। (**भूषण चौंकते हैं**) और भूषण जी से .....केस के डिटेल तो मै ले रहा हूँ। जी ठीक ! (**रिसीवर रख कर घूमते हैं।**)

भूषण : वकील साहब का फ़ोन था शायद।

मुंशी : जी हाँ, बिलकुल उन्हीं का था। आपके लिए मैंने पूछा तो बोले कि शायद उन्हें आने में देर हो जाये, इसलिए मै आपसे सारे डिटेल ले लूँ।

भूषण : और वही तो हम कर रहे हैं। (**रुककर**) तो मै कह रहा था.....

मुंशी : दो मिनिट और रुकिये मैं अभी हाज़िर हुआ। (**अन्दर जाने लगते हैं।**)

भूषण : तब तक मैं एक फ़ोन कर लेता हूँ।

मुंशी : ज़रूर कीजिए। पर फ़ोन करने के बाद पन्द्रह नये पैसे मेरी टेबल पर रख दीजिएगा। (**प्रस्थान**)

[**भूषण सिगरेट फेंककर डायल करता है।**]

भूषण : (**रिसीवर लेकर**) हलो ! कौन राय साहब ! जी मै भूषण बोल रहा हूँ—वकील के ऑफिस से...नहीं और कोई नहीं है अभी। हूँ.....काम तो हो रहा है....पर धीरे-धीरे ! बात यह है कि वकील साहब घर पर मिलते ही नहीं।....नहीं-नहीं ऐसी बात नहीं, केस वे लेंगे ज़रूर ! उनके मुंशी को जमा रहा हूँ—जी हाँ मुंशी ही सब कुछ है।....आप निश्चिन्त

रहिए। मैं पूरी सावधानी से काम कर रहा हूँ।..... और सुनिये यहाँ मुझे आपकी पुत्री.....जी हाँ, गाथा, मिलीं, नहीं तो ! मैंने मुंशी को पूरी तरह टटोल लिया—केस की बात करने वे नहीं आतीं। वकील की बहिन उनकी सखी है। (**अन्दर के दरवाजे की ओर देखकर**) मैं उनकी ओर से भी सतर्क हूँ। कोशिश तो यह कर रहा हूँ कि गाथा की कमजोरी पकड़कर उनका मुँह बन्द रखूँ।.... बाकी बातें आने पर करूँगा—आप होटल में ही रहिएगा.....ठीक !

[**रिसीवर रखकर जेब हाथ में डालते हैं और मुस्कुराकर निकाल लेते हैं। इसी समय तेजी से मुंशी जी प्रवेश करते हैं। अन्दर ही खिड़की से गाथा और माधवी दिखती हैं जो बाद में बाहर की खिड़की से दिखकर छिप जाती हैं।**]

मुंशी : (**अपनी टेबल पर जमते हुए**) फ़ोन हो गया ? (**भूषण सिर हिलाते हैं**) तो आप आगे बढ़िये।

भूषण : (**सोचते हुए**) तो मैं कह रहा था कि वह ऐसा प्रेमी चाहती थी जो उसका सच्चा भक्त हो। (**रुककर**) उसे एक मनचाहा प्रेमी मिल भी गया; और उसने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध उससे विवाह कर लिया।

मुंशी : (**नोट करते हुए**) चलिए एक अध्याय समाप्त हो गया।

भूषण : विवाह करते ही वह अपने पिता से अलग हो गई।

मुंशी : वो तो होता ही है। (**ऊपर देखकर**) पर भूषण जी, उसका धन का मोह कहाँ गया ?

भूषण : वह पिता की अकेली संतान थी—और धन उसके नाना का था—यह वह जानती थी।

मुंशी : वारा ! पिता के क्रोध के लिए कोई पकड़ ही नहीं थी।

भूषण : बस यही बात तो थी (**रुककर**) विवाह के पहिले पिता ने बेटी को इस मूर्खता करने से रोका था—पर वह नहीं मानी।

(**सोचते हुए**) इधर कुछ ही दिन बीते थे कि अचानक वह लड़का मर गया और वह लड़की विधवा हो गई। (**शीघ्रता से**) मृत्यु का कारण, एक मोटर-दुर्घटना बतलाई गई।

मुंशी : (**लिखते हुए**) मोटर-दुर्घटना! भूषण जी, हमारे वकील साहब को भी एक मोटर-दुर्घटना ने ही तबाह किया है। (**रुककर भूषण की ओर देखते हुए**) पर आपने कहा कि मोटर-दुर्घटना कारण बलताई गयी। बात पक्की नहीं कही आपने, याने कारण कुछ और भी हो सकता है।

भूषण : (**घबराकर**) हो सकता है या नहीं...ये....ये तो मैं नहीं जानता। मैं ये जानता हूँ कि उस दुर्घटना के बाद ही लड़का अस्पताल में मर गया। कुछ लोगों ने कहा कि लड़की के पिता ने उसे अस्पताल में ज़हर दिलवा दिया (**शीघ्रता से**) पर आपही बतलाइए कहीं ऐसा हो सकता है ?

मुंशी (**नोट करते हुए**) मैं तो लिख रहा हूँ। आपके इस प्रश्न का उत्तर तो कानून ही निकालेगा। (**ऊपर देखकर**) हाँ, तो इसमें आपको सलाह कहाँ चाहिये ?

भूषण · लड़की के पिता चाहते हैं कि वह फिर से शादी कर ले पर वह मानती नहीं। उसके पिता का विचार है कि यदि वह किसी तरह ज़ायदाद से बेदखल की जा सके तो शायद इस डर में आकर वह मान जाये।

मुंशी · (**नोट करते हुए**) हूँ ! तो ये बात है। थोड़े में आप यह चाहते हैं कि उस लड़की को उसके नाना की ज़ायदाद से बेदखल करने का सिलसिला जमाया जाए।

भूषण : (**हँसकर**) क्या दिमाग़ पाया है मुंशी जी ! आपतो बिलकुल मौक़े पर ही पहुँच गये।

मुंशी : (**चश्मा सँभालते हुए**) एक बात और बतलाइए । उस लड़की के पिता जी क्या करते हैं ?

भूषण : व्यापारी हैं।

मुंशी : और जिस लड़के से वे उस लड़को को व्याहना चाहते हैं वह क्या करता है ?

भूषण : (**कुछ गड़बड़ाकर**) वो....लड़का....लड़का ही....हाँ वह लड़का भी व्यापारी है--एक अच्छा खासा जमा हुआ... (**कॉलबेल बजती है**) लोजिए कोई और आ गया।

मुंशी : यहाँ तो यह दिनभर चलता है, (**जोर से दरवाजे की ओर मुँह घुमाकर**) कौन साहब हैं?.....आ जाइये।

[**माइकिल का ड्रेस में प्रवेश ! भूषण को देखकर माइकिल और माइकिल को देखकर भूषण हतप्रभ हो जाते हैं। मुंशी जी आश्चर्य से दोनों को पढ़ते हैं।**]

मुंशी : ऐं ! ये ....ये.... क्या हो गया आप दोनों को ?

भूषण : (**सँभलकर**) कुछ....कुछ तो नहीं। मुंशी जी बात ये है कि.....

मुंशी : (**बीच में**) कि आप इन्हें पहिचानते हैं ! और इन्हें यहाँ देखकर आपको आश्चर्य हो रहा है ! क्यों माइकिल ?

माइकिल : मैं भूषण जी को बहुत दिनों से जानता हूँ। ये भी मुझे जानते हैं।

मुंशी : (**हँसकर**) देखा क्या ताड़ा है ! साहब उड़तो चिड़िया के पर गिन लेता हूँ। भूषण जी, वकील का मुंशी हूँ, किसी घसियारे का छोकरा नहीं।

भूषण : ये तो मैं जानता हूँ--मानता भी हूँ। (**घूमकर**) हाँ, माइकिल तुम कैसे आये ?

मुंशी : ये तो आते ही हैं। इनके सेठ जी भी आये होगें।

भूषण : क्यों माइकिल लाला धरमदास जी आये हैं ?

माइकिल : आ ही रहे हैं। कार रुकते ही मुझसे बोले कि मैं चलकर वकील साहब को खबर दे दूं। (**कुछ संकोच भरे स्वर में**) और आप यहाँ कैसे ?

मुंशी : भैया, वकीलों के यहाँ लोग आते क्यों हैं ? (**हँसकर**) ये पूछने की बात नहीं, समझने की बात है।

भूषण : (**हँसने का प्रयास करते हुए**) आप भी खूब हैं मुंशी जी। क्या वकीलों के दोस्त भी नहीं हो सकते जो मिलने आयें !... खैर.....(**घूमते हुए**) मैं वकील साहब से फिर मिल लूंगा। अभी तो वे हैं भी नहीं....मैं चलता हूँ....! (**दरवाजे की तरफ बढ़ते हुए**) मेरा नमस्ते कह दीजिएगा....(**माइकिल आश्चर्य से देखता है।**)

मुंशी : आप भी खूब आदमी हैं। बात पूरी किये बिना ही चले.....

[**बैसाखी लगाये लाला धरमदास का प्रवेश। भूषण और लाला दरवाजे पर टकराते-टकराते बचते हैं।**]

धरम : अरे....अरे.....ये क्या भूषण जी...? हम आये और आप चले। दो घड़ी रुकिए तो ....।

भूषण : (**घबराये स्वर में**) नमस्ते....लाला जी ! हे...हे...हे आपके आने से मेरे जाने का कोई संबंध नहीं। मैं तो जा ही रहा था.....।

धरम : (**भूषण को पकड़ कर बीच में खींचते हुए**) सच कहिए। (**हँसकर**) भूषण जी आप मुझसे नहीं उड़ पायेंगे। (**रुककर**) पर अगर सच में आपका काम हो गया है तो मैं आपको नहीं रोकूंगा। (**मुस्कुरा कर**) क्यों मुंशी जी ये जा सकते हैं ?

मुंशी : ये तो इनकी इच्छा पर है। जबरदस्ती रोकना तो कानून के खिलाफ है। (**हँस पड़ते हैं**) वैसे वकील साहब हैं नहीं। ये भी बिना मिले ही जा रहे हैं।

धरम : तो फिर रुक जाओ न भाई! वकील साहब से मिलकर ही चलेंगे। तब तक यहीं बैठकर कुछ नये मुर्गे काटने की बातें हो जायें। (**हँसकर सिगरेट निकालते हुए**) सिगरेट लीजिए।

भूषण : (**सिगरेट लेकर बिना जलाये चलते हुए**) अभी मैं चलता हूँ, वकील साहब से फिर मिल लूंगा।

धरम : (**हँसकर**) मैंने कहा सिगरेट तो जला लीजिए। ताज्जुब है आप जलाना कब से भूल गये।

[**भूषण झेंपकर लौटते हैं और धरमदास से माचिस लेकर सिगरेट जलाते हैं। कश लेकर धरमदास जी की ओर देखते हैं फिर दोनों हँस पड़ते हैं।**]

भूषण : लाला जी मुझे चलने ही दीजिए। अच्छा यही है कि हम दोनों वकील साहब से अलग-अलग मिलें। (**घूमकर**) मुंशी जी मैं चल दिया। मेरी बात जहाँ थी वहीं रही। लाला जी, नमस्ते!

[**धरमदास मुस्कुराकर सिर झुकाते हैं और भूषण सिगरेट का धुआँ छोड़ते हुए प्रस्थान करते हैं।**]

मुंशी : (**कोट के बटन ठीक करते हुए**) बेढब आदमी है। न ठीक से खुलते हैं न ठीक से बन्द होते हैं। मेरी समझ में कुछ नहीं आता।

धरम : मैं समझा दूंगा—घबराइए नहीं। (**माइकिल की ओर मुड़कर**) माइकिल जाकर पता तो लगाओ कि ये रुके कहाँ हैं? यहाँ तो इनका घर है नहीं। ..... (**माइकिल घूमने लगता है**) और देखो ये भी पता लगाना कि इनके साथ कोई और है क्या?

माइकिल : जी! कार ले जाता हूँ।

धरम : ले जाओ! और देखो मान जायें तो अपनी कार से ही पहुँचा

देना। कहना (**हँसकर**) लाला धरमदास ने प्रार्थना की है। जाओ जल्दी।

माइकिल : जी। (**तेजी से प्रस्थान**)

[**माइकिल के प्रस्थान के बाद धरमदास सिगरेट का कश लेकर घूमते हैं।**]

धरम : (**हँसकर**) मुंशी जी चोर से चोर और डाकू से डाकू भी डरते हैं। क्यों ठीक है न ?

मुंशी : (**मूर्खों की तरह बनकर**) मैं समझा नहीं लाला जी !

धरम : तभी तो आप वकील के मुंशी हैं। समझते तो वकील हो जाते। (**हँसी**)

मुंशी : मैं जो हूँ उसी में खुश हूँ। हाँ, यह बतलाइए कि आप इन्हें जानते हैं ? अच्छी तरह या यों ही।

धरम : अच्छी तरह जानता हूँ। इन्हें जानता हूँ, इनके बिजनेस पार्टनर को जानता हूँ। इनके बिजनेस को जानता हूँ.... सभी कुछ तो जानता हूँ—क्या-क्या कहूँ।

मुंशी : क्या बिजनेस है इनका ?

धरम : (**हँसकर**) वही जो बड़ा बिजनेस होता है—पैसे पैदा करने वाला। मुंशी जी बिजनेस आजकल एक ही रह गया है—किसी तरह कहीं से पैसा ऐंठना बस। उसके जो सामने आये उसे जीतना पड़ता है—हाथ जोड़कर या उसके हाथ तोड़कर—यही ये भी करते हैं।

मुंशी : (**भोलेपन से**) ये आप कैसे कह सकते हैं ?

धरम : (**मुंशी जी की तरफ सिगरेट बढ़ाकर**) सिगरेट तो पीते हैं न ? (**मुंशी जी बढ़कर सिगरेट लेते हैं। सिगरेट जलाने के लिए मुंशी जी धरमदास की सिगरेट लेने के लिए हाथ बढ़ाते हैं पर धरमदास दियासलाई देते हैं।**) हम और भूषण दोनों

ही एक सिगरेट पीते हैं और एक ही ढंग से जलाते हैं। (**हँसकर**) कई कश हम दोनों ने एक साथ ही खींचे हैं।

मुंशी : (**सिगरेट जलाकर कश लेते हुए**) आप तो पहेलियाँ बुझाते हैं।

धरम : मुंशी जी ज़िन्दगी से बड़ी और कौन सी पहेली है।

[**बाहर की खिड़की के पास आ जाते हैं।**]

मुंशी : (**सिगरेट मुठ्ठी में दबाते हुए**) अहा! क्या बात कही है कि बात की बात में मैं अपनी बात भूल गया।

धरम : (**घूमकर**) क्या भूल गये आप?

मुंशी : यही कि वकील साहब नहीं हैं और....

धरम : ये तो आप मेरे आते ही बतला चुके। आपने यह भी कहा था कि वे जल्दी ही आयेंगे।.....मैं मिलकर ही जाऊँगा।

मुंशी : मैं क्या कह गया था—भूल गया था। बात दरअसल ये है कि भूषण जी के इस नाटक ने सब कुछ भुला दिया। देखिये न, दूसरे शहर से आये हैं और फिर भी इस तरह समय बर्बाद कर रहे हैं। उधर होटल में जो रुपया बेकार फेंक रहे हैं—वह अलग।

धरम : रुपया कहाँ फेंक रहे हैं। मुझे तो नहीं दिखता कि इसमें कुछ भी बेकार है। मुंशी जी, इस बात पर मैं आपसे क्या किसी से भी समझौता नहीं कर सकता। भूषण का रुपया होटल मालिक के पास ही जायेगा और उसके तथा उसके नौकरों के काम आयेगा। यदि भूषण जैसे सभी आदमी रुपया बचाने की बात सोचने लगें तो होटलवाले और उनके नौकर-चाकर जियें कैसे? (**हँसकर**) ये राष्ट्रीय कार्य है—सहकारी भावना का उदाहरण है। रुपया तो ऐसा होना ही चाहिए जो हमेशा घूमता रहे। रुका या कहीं जमा हुआ कि समझिये सड़ गया—पानी की तरह।

मुंशी : (**चश्मा साफ करते हुए**) बात तो आपकी ठीक लग रही है।

धरम : (**अरूप की टेबल पर टिकते हुए**) कुछ दिनों पहिले मैंने कार-पोरेशन के अस्पताल की इमारत ठेके पर बनाई थी। बनने के कोई तीन-चार महीने बाद उसमें दरारें आ गईं।

मुंशी : (**चौंककर**) तीन-चार महीनों में ही दरारें!

धरम : (**हँसकर**) जी हाँ दरारें! मुंशी जी दरारें हमारी-आपकी ज़िन्दगी में भी तो हैं। (**रुककर**) उसपर लोगों ने बड़ा हो-हल्ला मचाया कि रुपया बर्बाद हुआ। (**कुछ तेज़ी से दर्शकों की ओर देखकर**) मैं पूछता हूँ क्या बर्बाद हुआ? रुपया कुछ मैंने खाया, कुछ मेरे मज़दूरों ने और कुछ मुझे सामान देने वालों ने खाया.....आखिर सारा रुपया देश के लोगों के काम ही आया न? (**रुककर-घूमते हुए**) बर्बाद तो तब होता जब मैं नोट जला देता या चोरी से विदेशों में भर देता।

मुंशी : (**बनावटी ढंग से**) बड़े ऊँचे विचार हैं आपके।

धरम : (**सिगरेट का कश लेकर**) जैसा आदमी होता है वैसे ही उसके विचार भी होते हैं मुंशी जी!

मुंशी : (**मार खाकर**) जी....जी....ये तो ठीक है। क्या कहने हैं आपके.....इसीलिए तो वकील साहब को भी आपसे मिलकर खुशी होती है।..... (**आरामकुर्सी की ओर संकेत कर**) आप यहाँ बैठकर उनके आने तक आराम करें, तब तक मैं कुछ काम कर डालता हूँ।

धरम : काम बाद में कीजिएगा, पहिले वकील साहब को फ़ोन कर दीजिए कि मैं इन्तज़ार कर रहा हूँ।

मुंशी : कहाँ फ़ोन करूँ? कहाँ गये हैं, ये मुझे नहीं मालूम। उन्होंने ही फ़ोन किया था पर कहाँ से किया था न उन्होंने बतलाया--न मैंने पूछा। आप जहाँ चाहें फ़ोन कर देखिए।

(**शरारत से हँसकर**) लालाजी अपना काम अपने हाथ से ही करना ठीक होता है। आजकल इसे ही बड़ी बात माना जाता है।

धरम : (**कुछ क्रोध से—अन्दर की खिड़की के पास उचकते आते हैं**) मुंशी जी ये वकील साहब का बगीचा है, इसकी देखरेख के लिए माली है। घर में काम करने के लिए नौकर भी होंगे, और यहाँ आफिस में आप मुंशी हैं—क्यों? वकील साहब ये सारा काम खुद ही क्यों नहीं करते? काम सभी तो कर सकते है वे, फिर क्यों नहीं करते? (**रुककर**) यदि ज़माने की बात मानकर वे सारे काम खुद ही करने लगें तो माली, नौकर-चाकर और आप क्या करेंगे? (**कुछ तेज स्वर में**) बोलिए फिर क्या करेंगे?

मुंशी : (**चौंककर**) जी....मैं....मैं....क्या करूँगा.....?

धरम : जी हाँ, आप बेकार हो जायेंगे। माली और नौकर भूखों मर जायेंगे। इसीलिए मैं अपना सारा काम अपने हाथ से करने के पक्ष मे नही हूँ। (**रुककर**) पता नहीं लोग ऐसा क्यो कहते है—कैसे कहते है? यदि समाज का हर आदमी अपने सारे काम अपने आप करने लगे तो समाज कहाँ रहेगा। एक दूसरे से मिलने का, साथ बैठने-हँसने-बोलने का सिलसिला ही खत्म हो जायेगा। (**मुंशी जी की अवाक् मुद्रा देखकर**) आपको ताज्जुब हो रहा है मुंशी जी! यदि सही माने मे दुनिया के सारे लोग अपने ऊपर ही निर्भर हो जायें तो आदमी आदमी न रहकर जानवर हो जायेगा, (**हँसकर**) समझे आप।

मुंशी : (**चौंककर**) जि....जी....जी....हाँ समझ गया। (**फ़ोन की तरफ बढ़ते हुए**) मैं ही करता हूँ फ़ोन, आप बैठिए।

धरम : मैं बैठूंगा नहीं। (**हँसकर**) बैसाखी नहीं थकती। थकते तो पैर हैं। आप फ़ोन कीजिए।

मुंशी : (**डायल कर**) हलो, मैं मुंशी खैरातीलाल.....मेरे वकील साहब हैं वहाँ?.....नहीं हैं। जी.....माफ़ कीजिए तकलीफ़ दी। (**डिसकनेक्ट कर फिर डायल करते हैं**) हलो एडवोकेट अरूप बिहारी हैं वहाँ.....मैं उनका मुंशी खैरातीलाल.....जी.....

अरूप : (**प्रवेश करते हुए हँसकर**) मुंशी जी एडवोकेट अरूप बिहारी यहाँ हैं। धरमदास जी नमस्ते।

[**मुंशी जी फ़ोन रख देते हैं धरमदास मुस्कुराकर आगे बढ़ते हैं।**]

धरम : आपकी ही राह देख रहा था। (**हँसकर**) और इस तरह झुककर मुंशी जी आपको ही खोज रहे थे।

अरूप : (**मुस्कुराकर**) अच्छा, (**रुककर सोचते हुए**) मुंशी जी मधु की सखी हैं?

मुंशी : जी नहीं। आपने ही तो कहा था.....(**अरूप की मुद्रा देखकर**) मैंने मधु दीदी से बात कर ली थी उनकी सखी होस्टल लौट गई।

अरूप : और भूषण जी! वे कहाँ उड़ गये?

धरम : मुझे देखते ही भूषण जी चल दिये।

मुंशी : मैंने तो रोका भी था। कहने लगे कि फिर मिल लेंगे।

अरूप : (**हँसकर**) फिर कह गये--फिर आने के लिए। ग़ज़ब के आदमी हैं।

धरम : (**हँसी में हँसी मिलाकर**) आपके लिए, मेरे लिए नहीं। (**सिगरेट निकालकर सुलगाते हुए**) अगर अब मुंशी जी कुछ आराम कर लें तो वकील साहब, आपको कोई एतराज़ है?

अरूप : जी नहीं, बिलकुल नहीं। मुंशी जी को भी नहीं होगा; (**हँसकर**) क्यों मुंशी जी ठीक है न?

मुंशी : (**समझते हुए**) जी बिलकुल ठीक। (**बाहर के दरवाज़े से प्रस्थान**)।

अरूप : (**बाहर की खिड़की से देखते हुए**) आप कार से नहीं आए क्या ?

धरम : आया तो कार से ही था। ड्राइवर को कार लेकर एक काम से भेज दिया था—आता ही होगा।

अरूप : मुझसे आँखें बचाने के लिए कहीं आपका ड्राइवर अपने आप ही तो नहीं चला गया। (**रुककर**) न जाने क्यों वह मुझसे आँखें चुराता है। (**घूमते हुए**) मैंने कई बार देखा है।

धरम : (**टालते हुए**) उसकी आदत है। अभी भी शर्माता है—कोई और खास बात नहीं है ।

अरूप : खास बात हो भी क्या सकती है । ख़ैर ! अब आप अपनी सुनाइए। कोई नयी बात।

धरम : (**अटकते हुए**) नयी बात क्या होगी....!

अरूप : पिछले केस के विषय में तो मैंने अपने सारे विचार वर्मा जी से कह दिये थे। आपको जो नोटिस मिला था उसका जवाब भी बना दिया था।

धरम : (**प्रसन्न होकर**) उससे तो मेरा बहुत बड़ा काम हो गया। वह जवाब जिसने भी देखा उसने ही तारीफ़ की। वो केस तो मेरा तगड़ा बन गया है। (**जेब से नोटों का पुलिन्दा निकालकर**)... और आपको फ़ीस देना मैं भूल गया....अब लाया हूँ।...... इस देरी के लिए माफ़ी चाहता हूँ।

अरूप : रुपये आप रखे रहिए—और जाकर ये रुपये वर्मा जी को दे दीजिएगा। मेरी जो फ़ीस है वे मेरे पास भेज देगें। (**ज़ोर देकर**) रख लीजिए। मैं अपनी फ़ीस उन्हीं साथियों के ज़रिये लेता हूँ जो मेरे पास केस भेजते हैं।

धरम : (**दृढ़ता से**) फिर भी फ़ीस की रक़म का पता तो चले।

अरूप : वर्माजी जानते हैं। ये उलझन उन्हीं से सुलझाइएगा। हाँ कोई

नये केस का उलझन हो तो कह डालिए---अभी मुझे कुछ समय है। आधे घंटे बाद चार-छः लोग आने वाले हैं।

धरम : (**नोट जेब में रखते हुए**) हुँः ! आप भी खूब आदमी हैं। (**दूसरे जेब से एक क़ाग़ज निकालते हुए**) मैंने आपसे पहिली मुलाक़ात के वक़्त कहा था कि पुलिस ने मुझपर दफ़ा १०७ और १०९ के मुकदमे भी चलाये हैं।

अरूप : (**सोचते हुए**) हूँ। याद है। (**अपनी टेबल पर टिकते हुए**) पर ये दोनों दफ़ायें गुंडागिरी के लिए हैं—एक अकेले के लिए और दूसरी पार्टी बनाकर गुंडई करने के लिए ? (**हँसकर**) आप गुंडागिरी.....!

धरम : (**बाहर की खिड़की के पास टिकते हुए**) वकील साहब एक नयी दफ़ा और बढ़ गई है—३०७।

अरूप : ३०७। किसी के खून की कोशिश। (**उठते हुए**) पर इन सबके लिए पुलिस के पास कुछ सबूत तो होंगे।

धरम : (**मुंशीजी की टेबल की ओर बढ़ते हुए**) गुन्डागिरी वाली बात तो पूरी तरह मैं भी नहीं समझा। (**रुककर**) एक बार मेरे किरायेदारों को कुछ लोगों ने मारा-पीटा था। उसी में पुलिस ने मुझे भी खींचा है। और जहाँ तक इस नयी दफ़ा का सवाल है, उसके लिए उन्होंने मेरी कार का एक एक्सीडेन्ट लिया है।

अरूप : (**कुछ चौंककर**) कार का एक्सीडेन्ट !

धरम : वकील साहब जब कार भीड़भाड़ वाली सड़क पर दौड़ेगी तो एक्सीडेन्ट तो होंगे ही। और ये कोई नयी बात तो नहीं। अभी तक मेरी कार से, मेरी ट्रकों से, न जाने कितने एक्सीडेन्ट हुए हैं। उनसे कुछ अपंग हुए, कुछ मरे भी होंगे....पर.....।

अरूप : (**भावों में उलझकर**).....कुछ अपंग हुए. ....कुछ मरे भी....।

धरम : जी हाँ। पर अभी तक कभी ऐसा मौक़ा नहीं आया। मेरे ड्राइवरों पर छोटे-मोटे केस चले, कुछ फाइन हुआ—बस बात वहीं खत्म हो गई। (**रुककर**) कुछ को सजायें भी हुई थीं—पर उन्हें मैंने बचाया, फाइन दे-देकर छुड़ाया.....!

अरूप : आपने क्यों छुड़ाया ?

धरम : वे मेरे ड्राइवर थे, इसलिए। आखिर अपने नौकरों का ख्याल तो रखना ही होता है। (**बैसाखी पर तेज़ी से कूदते हुए बाहर के दरवाज़े के पास आकर**) और इस बार एक एक्सीडेन्ट हो गया तो मुझे और मेरे ड्राइवर माइकिल दोनों को ही ३०७ में पुलिस ने घेर लिया।

अरूप : (**सँभलते हुए**) एक्सीडेन्ट में किसको चोट लगी ?

धरम : (**कुछ घबराकर**) एक....एक....आदमी था.....पैदल..... ग़लत बिलकुल ग़लत ढंग से चल रहा था सड़क पर। (**बनावटी क्रोध से**) मैं....मैं क्या बतलाऊँ वकील साहब अपने देश में लोगों को पैदल चलना भी नहीं आता।

अरूप : (**विचारों में**) कार पर चढ़कर पैदल चलने वालों को हम हमेशा दोषी ठहरा सकते हैं। (**रुककर**) धरमदास जी जिसे चोट लगी वह था कौन। यही बात सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है ?

धरम : स्टार कन्सट्रकशन कंपनी का मालिक....।

अरूप : (**ज़ोर देकर**) उस कंपनी का आपसे कम्पटीशन तो रहता ही होगा। आपका काम भी बहुत कुछ वैसा ही है।

धरम : (**अटकते हुए**) पर उस कम्पटीशन को खत्म करने के लिए मैंने ऐसा नहीं किया।

अरूप : (**पुस्तकों की आलमारी के पास रुककर किताबों पर आँख गड़ाते हुए**) मैं आपसे यह कहाँ पूछ रहा हूँ। मैं तो

सिर्फ कम्पटीशन की बात पूछ रहा था (**घूमकर हँसते हुए**) पर आप सच कह गये ।

धरम : (**बनावटी क्रोध से**) तो आपका शक है कि मुझपर पुलिस का चार्ज ठीक है ।

अरूप : (**मुस्कुराते हुए**) आप मेरे दिमाग़ से शक़ निकाल दीजिए ।

धरम : (**अरूप के पास आते हुए**) जब शुरू ही शक़ से हुआ है तो, मेरी तो मुश्किल है ।

अरूप : (**गंभीर होकर**) देखिए धरमदास जी, वकील से सच छिपाकर आप अपना केस बिगाड़ लेंगे । (**रुककर**) और मैं तो उन वकीलों में से हूँ जो अपने मुवक्किल से अपने प्रति ईमानदारी चाहते हैं ।

[**धरमदास उत्सुक निगाहों से यहाँ-वहाँ देखते हैं—फिर स्वयं खिड़कियाँ और दरवाज़े झाँकते हैं । अरूप मुस्कुराते हुए उन्हें देखते हैं ।**]

अरूप : धरमदास जी यहाँ कोई नहीं है । वकीलों का आफिस बुरी से बुरी और भयंकर से भयंकर कहानियाँ चुपचाप पी जाता है ।

धरम : (**डरे स्वर में**) वकील साहब, कहा है कि दीवारों के कान होते हैं ।

अरूप : पर धरमदास जी जिनके कान होते हैं, उनके दिल भी होता है । आप फिकर न करें । (**रुककर**) अब आप मुझे सच क्या है, बतलायें ।

धरम : (**सिर झुकाकर**) सच तो आप समझ गये ! (**रुककर**) माइकिल से मैंने कहा था कि उसे सिर्फ़ डराना है, जिससे कुछ दिन घर से न निकले । मशीन तो मशीन है, आदमी की जब तक मानती है तब तक ठीक, वर्ना ले डूबती है—वही हुआ । माइकिल इन कामों में बड़ा तेज़ है पर उस दिन

उससे भी कुछ ऐसा हो गया जो नहीं होना चाहिए था। **(सिर उठाकर घूमते हुए)** बुरा ये ज्यादा हुआ वकील साहब, कि उस वक़्त कार पर मैं भी बैठा था। माइकिल उसी समय मुझसे पक्का हुकम लेने के लिए पीछे देखने लगा और **(साँस लेकर)** बस.....!

अरूप : बहुत चोट आई है क्या ?

धरम : **(धीरे-धीरे)** सुना तो यही है। पूरे अस्पताल में हंगामा मचा है।

अरूप : **(सोचते हुए)** पर पुलिस को आपके इरादे का पता कैसे चला ? बिना उसका पता लगे तो यह मामूली एक्सीडेन्ट ही रहता।

धरम : माइकिल पर कई केस ऐसे ही चल रहे हैं। हरबार उससे ऐसा ही एक्सीडेन्ट हो, यह बात कुछ दुश्मनों ने—कुछ पुलिस वालों ने ताड़ ली। लोगों ने उसे खूब शराब पिलाई और नशे में उससे सब कुछ कहला लिया। **(रुककर)** अब हम दोनों ही किसी तरह ज़मानत पर छूटे हैं। **(बाहर मोटर का हार्न सुनाई देता है। अरूप चौंक पड़ता है)**.....मेरी कार है—ड्राइवर लौट आया होगा। **(रुककर)** तो वकील साहब इस नयी साँसत में जान फँस गई है—इसीलिए इतने दिनों आपसे मिल भी नहीं पाया।

अरूप : वर्मा जी तो मिले थे। उन्होंने भी इस संबंध में कुछ नहीं कहा।

धरम : **(धीरे-धीरे)** उनके पास मेरे पुराने मुक़दमों की ढेरों फाइल जमा हो चुकी हैं। इसलिए मैं इस केस के लिए उनके पास नहीं गया। शुरू में एक नये वकील से काम निकाल लिया था, अब आपके पास आया हूँ।

अरूप : **(सोचते हुए)** हूँ। मामला मामूली नहीं है।

धरम : (**चालाकी से**) मैं जानता हूँ—इसीलिए, मैं तैयारी से आया हूँ। और इस बार तो सीधा आपके ही पास आया हूँ—फ़ीस वग़ैरह की तरफ से बेफिक्र रहिएगा (**अरूप को कुछ चुप देखकर**) कई केस की कसर मेरे इसी एक केस में पूरी हो जायेगी !

अरूप : (**रूखी हँसी के साथ**) धरमदास जी मैं वही करूँगा जो मुझे करना चाहिए। इस संबंध में मुझे न आपकी सलाह चाहिए न ये लालच।

धरम : तो अभी इजाज़त दीजिए—पुलिस रिपोर्ट की नक़ल और कुछ काग़ज़ात लेकर एक-दो दिनों में फिर हाज़िर हो जाऊँगा।

अरूप : (**अचानक**) तो आपके ड्राइवर को भी बचाना है न ?

धरम : वकील साहब मैं त्यागी महात्मा नहीं। मैं हमेशा पहिले अपनी फिकर करने का आदी हूँ और अभी भी यही चाहूँगा।

अरूप : आप जैसे अपने नौकरों की फिकर न करेंगे तो बेचारे या तो भूखों मर जायेंगे या जेलों में सड़ेंगे।

धरम : भूखों तो कोई नहीं मरता। भूख लगने पर हर आदमी चोरी करता है। मैं तो समझता हूँ वकील साहब कि दुनिया में आदमी बदहज़मी या पेट की बीमारियों से मरते हैं—भूख से नहीं। (**अरूप की मुद्रा देखकर**) यदि भूख इतनी खतरनाक साबित हुई होती तो भूख मारने की दवाइयाँ खूब बिकतीं—पर आप देखिए दवाइयाँ बिकती हैं हाज़मा सुधारने की। (**रुककर**) और जहाँ तक जेल में सड़ने का सवाल है तो वह भी किस्मत की बात है।

अरूप : तो मतलब यह है कि आप माइकिल के लिए कुछ नहीं करना चाहते।

धरम : जहाँ तक मुझपर आँच नहीं आती, मैं सबके लिए कुछ न कुछ कर सकता हूँ। पर यह बात ग़लत है कि मैं दूसरों के लिए—

अपने ड्राइवर के लिए—अपना गला फँसा दूं। (**घूमते हुए**) और अगर ड्राइवर मेरे लिए बलिदान भी होगा तो नमक हलाल कहलाएगा। (**दरवाज़े की ओर बढ़ते हुए**) आप मेरी बात समझ गये होंगे।

अरूप . (**साँस लेकर**) अच्छी तरह समझ गया। जो आप पूरी तरह नहीं कह पाये, वह भी समझ गया।

धरम . ये और अच्छा है। तो फिर मिलूंगा। नमस्ते।

[**धरमदास का प्रस्थान, अरूप खिड़की से उसे देखते हैं और कुछ क्षणों विचारों में डूबे रहने के बाद फ़ोन के पास आकर डायल करते हैं।**]

अरूप . (**फ़ोन पर**) हलो.....वर्मा साहब हैं....भाई वर्मा मैं अरूप! नहीं कोई खास बात नहीं।...अभी आपके लाला धरमदास आये थे। जी हाँ (**हँसकर**) आपके ही....बिना मतलब क्यों आयेंगे। मेरा तो विचार है कि वे उनमें से हैं जो बिना अर्थ के अर्थी के पीछे भी नहीं चलते! (**हँसी**) हूँ। एक नयी उलझन लेकर आये थे। नया मामला तो है ही ३०७ का.....अच्छा (**चौंककर**) ऐं आपके पास आ चुके हैं! पर मुझसे कह रहे थे कि आपसे मिले ही नहीं। ओ! तो यह बात है.....आप नाहीं कर चुके हैं। मुझे भी लगता है कि केस में कोई दम नही है। एक-दो दिन में फिर आने वाले हैं तब उनसे अच्छी तरह मिलूंगा (**हँसी**)! हाँ...हाँ अच्छा! माइकिल उनका ड्राइवर। उससे क्या पता चलेगा। उसे डरा-धमकाकर पूछना होगा। ठीक.....ऐसा ही किया जायेगा। (**कॉलबेल बजती है--अरूप दरवाज़े की ओर देखकर निगाहें घुमा लेते हैं**) तो उस ड्राइवर से मतलब की काफी चीज़ें मिलेंगी....हूँ...हूँ....हूँ....(**कॉलबेल फिर बजती है**) भाई, फिर कोई साहब

आ धमके हैं ! बेल के प्राण लेने पर तुले हैं ! तो बाकी बातें शाम को मिलकर ही करेंगे। ठीक है न.... (**हँसी.....। रिसीवर रखकर दरवाज़े की ओर बढ़कर**) आ जाइये। (**चारों तरफ़ भयभीत दृष्टि डालते हुए भूषण का प्रवेश**) अरे आप तो चले गये थे भूषण जी !

भूषण : जी हाँ ! पर आपसे मिलना भी ज़रूरी था। रास्ते में मुंशी जी मिले उन्होंने बतलाया कि आप आ गये हैं। उसके बाद मोड़ पर लाला धरमदास की कार भी लौटती दिखी तो मेरी इच्छा और बढ़ गई। (**सिगरेट निकालकर सुलगाते हैं**)

अरूप : पर आप धरमदास से भागते क्यों हैं ? वे भी यही कह रहे थे। आप उनके आते ही चल दिये।

भूषण : मेरा सिद्धान्त है कि वकील और डाक्टर के पास जब एक आदमी हो तो दूसरे को नहीं जाना चाहिए। वे रुकना चाहते थे इसलिए मुझे जाना पड़ा। बस और कोई बात नहीं।

अरूप : (**चालाकी से**) पर वे तो कुछ और कह रहे थे !

भूषण : (**गड़बड़ाते हुए**) ....क्या कह रहे थे ....? कहेंगे भी क्या.... और है क्या ऐसा !.....जैसे हैं वैसा ही सबको समझते हैं। और क्या !

अरूप : (**बनाते हुए**) क्यों ? कैसे हैं वो ?

भूषण : (**अचानक**) ज़माने भर के गुंडों के सरदार ! लोगों से रुपये ले-लेकर सभी तरह के ज़ुर्म करना उनका रोज का काम है। उन्हें रुपया दीजिए फिर चाहे उसके बदले किसी का सिर फोड़वाइए, हाथ पैर तोड़वाइए या हत्या कराइए।

[सिगरेट का कश खींचकर साँस छोड़ते हुए]

अरूप : आप तो ऐसे कह रहे हैं जैसे आपका और उनका कभी साथ रहा है।

भूषण : (**घबराकर**) जि.....जी.....मेरा उनका क्या साथ ! नहीं-नहीं वकील साहब ऐसी कोई बात नहीं। हाँ, मैं उन्हें जानता जरूर हूँ। (**रुककर**) मेरे कुछ परिचितों ने उनसे ऐसे काम कराये भी हैं, मुझे इसलिए मालूम है। (**सँभलते हुए**) पर इससे हमें क्या, जैसा करेगें वैसा भुगतेंगे। मैं तो आपसे अपने काम की बात करना चाहता था।

अरूप : (**साँस लेकर**) हूँ ! मुंशी जी से तो आपने अपने केस के विषय में कुछ बातें की है !

भूषण : (**सिगरेट की राख झराते हुए**) केस की आउट लाइन तो मैं उन्हें समझा गया था।

अरूप : तो ठीक है। मैं मुंशी जी से बातें करने के बाद आपसे चर्चा करूँगा।

भूषण : आपसे भी एक बात कहना है। बहुत जरूरी (**अरुप का मुँह देखकर, सिगरेट का आखरी भारी कश लेकर उसे जमीन पर पटक कर परों से कुचल देते है।**) मैं उस विधवा का अभिमान कुचलना चाहता हूँ।

अरूप : (**अपनी टेबल की ओर बढ़ते हुए**) आप ? आप क्यों उससे नाराज़ हैं ? आपका क्या संबंध है उससे ?.....आपने तो.....

भूषण : (**बीच में**) मेरा.....मतलब है.....मेरी इच्छा है कि उसका अभिमान कुचला जाये। मेरा उससे कुछ संबंध नहीं पर एक पुरुष होने के नाते उस स्त्री के घमड से मुझे चिढ़ है। (**बनकर**) आप नहीं जानते उसे अपनी सुन्दरता का कितना घमंड है।

अरूप : (**खिचते हुए**) सुन्दरता का घमंड....!

भूषण : (**तांड़ते हुए**) बस मैं उसके इसी घमंड पर चिढ़ा हूँ। उसका दावा है कि उसकी सुन्दरता हर मन पर राज कर सकती है। मैं इसका विरोध करना चाहता हूँ।

अरूप : (**धीरे-धीरे**) घमंड का विरोध तो होना ही चाहिए। और... जब वह घमंड शारीरिक सुन्दरता को लेकर सामने आये तो उसे.....

माधवी : (**अन्दर के द्वार पर आकर**) मैं आ जाऊँ भैया !

अरूप : (**घूमते हुए**) यदि बहुत आवश्यक बात न हो तो कुछ देर रुक जाओ।

भूषण : (**माधवी को देखकर झेंपते हुए**) वकील साहब मेरी बात तो हो चुकी। (**हँसने की कोशिश करते हुए**) अब आप भाई-बहन बातें कीजिए और मुझे आज्ञा दीजिए।

अरूप : जैसी आपकी इच्छा !

भूषण : (**घूमते हुए—हाथ जोड़कर**) अच्छा जी, नमस्ते (**माधवी से**) नमस्ते। (**प्रस्थान**)

माधवी : (**भूषण का आँखों से पीछाकर**) भैया ये भूषण जी मेरी सखी गाथा को जानते हैं। अभी दोनों मिले थे—(**हँसकर**) खूब मिले ! शायद बहुत दिनों बाद मिले थे इसलिए बड़ी-बड़ी बातें हुई दोनों में। मैं तो दोनों को यहीं छोड़कर अन्दर चली गई थी ! बातों-बातों में एक बार भूषण ऐसा हँसे कि उसे सुनकर एक ओर से मैं घबराकर आई और दूसरी ओर से मुंशी जी। हमें देखते ही उनकी बातें बन्द हो गईं और गाथा का सिर (**हँसकर**) चकराने लगा। (**शरारत से**) गाथा से मैंने पूछा भी था कि क्या रिश्ता है पर वह शर्मा गई।

अरूप : (**विचार में**) अच्छा !

माधवी : और क्या ! कहती भी क्या ! मेरे आने के बाद वह झेंपकर अन्दर आ गई ! ये बाहर ही बाहर लौट गये। वह बेचारी उसके बाद आपसे मिलने के लिए बैठी रही। पर आपने फ़ोन पर

मुंशी जी से कह दिया कि नहीं मिलेगें। न भूषण से पूरी बात कर पाई, न आपसे मिल पाई! बेचारी निराश लौट गई।

अरूप : तो मैं क्या करूं! लौट जाने दो।

माधवी : (**रुककर**) अबकी बार मैं उसे नहीं लौटने दूंगी। आपको उससे मिलना ही होगा। दुनिया भर के लुच्चे लफंगे आपसे मिल सकते हैं और मेरी सखी आपसे नहीं मिल सकती! जब-जब मैं उसे बुलाती हूँ आप टाल देते हैं।

अरूप : मैं सुन्दरता के अभिशाप की छाया में नहीं आना चाहता मधु! उससे दूर रहना चाहता हूँ! (**घूमकर कुछ गंभीरता से**) यदि दुनिया से सुन्दरता का अस्तित्व मिट जाये तो दुनिया कितनी शान्त हो जायेगी।

माधवी : कैसी उल्टी बातें सोचने लगे हैं आप! कहाँ आप कहा करते थे कि सुन्दरता मन की वस्तु है और कहाँ आप ही ऊपरी सुन्दरता को लेकर इतना क्रोध कर रहे हैं। (**रुककर**) मैंने आपसे ये भी तो कहा था कि गाथा को अपनी सुन्दरता से घृणा है! वह ऊब गई है अपनी सुन्दरता से! विश्वास कीजिए भैया, गाथा तो कहती है कि यदि वह सुन्दर न होती तो उसका जीवन अधिक शांतिमय होता।

अरूप : (**भावों में उलझ**) तुम्हारी सखी को अपनी सुन्दरता से घृणा है! (**माधवी सिर हिलाकर सहमति प्रकट करती है**)...और तुमने अभी ये भी तो कहा कि भूषण तुम्हारी सखी को जानता है!

माधवी : खूब अच्छी तरह। मुझे तो पहचान पुरानी लगती है।

अरूप : (**उलझी मुद्रा में**) मधु! भूषण एक सुन्दर विधवा की बात करता है....जिसे अपनी सुन्दरता पर घमंड है! तुम अपनी सुन्दर सखी की बात कहती हो जिसे सुन्दरता से घृणा है।

भूषण.....और तुम्हारी सहेली.....भूषण....और वह विधवा... तुम्हारी गाथा और भूषण .....अलग-अलग लगते हैं....पर...पर सुन्दरता एक है.....सुन्दरता की जलन एक है.... (**व्यथित स्वर में**) कुछ समझ में नहीं आता मधु ! कुछ समझ में नहीं आता ! विधवा से मुझे घृणा नहीं, पर भूषण जिस सुन्दर विधवा की बात करता है—मन में आता है उसे मिटा दूँ। (**तेज साँस शांत करते हुए**) पर तुम जिस सुन्दर गाथा की बात करती हो—जो चाहता है उसके लिए कुछ करूँ...जरूर करूँ! जहाँ सुन्दरता अभिशाप है मैं वहाँ झुक सकता हूँ पर जहाँ (**तेज साँस लेकर**) सुन्दरता अभिमान का आधार है वहाँ मै आग लगा दूंगा !

माधवी : (**प्रसन्न होकर**) यही तो चाहती हूँ मैं ! मेरे भैया ! (**उत्साह से**) तो....तो आप मेरी गाथा से मिलेंगे न, उसकी गाथा सुनेंगे न.....बोलिए...जल्दी बोलिए !

अरूप : (**शांत होकर**) मिलूंगा.....मन कहता है तुम्हारी बात मान लूं ! (**साँस लेकर**) एक बार और परख देखूं सुन्दरता के प्रभाव को !

माधवी : (**प्रसन्न होकर**) तो आप गाथा से मिलेंगे ! (**अरूप की मुद्रा देखकर**) गाथा सुनेगी तो नाच उठेगी।

[**माधवी प्रसन्नता से अन्दर की ओर भागती है। अरूप शान्त भाव से उसे देखते हैं**]

(**पर्दा गिरता है।**)

तृतीय अंक

[**कुछ दिनों बाद ! अरूप बिहारी का वही आफिस ! घड़ी में पाँच बजकर कुछ मिनिट हुए हैं ! खिड़कियों से सूर्य की सुन्दर किरणें पेड़ों की फुनगी पर बैठी दिख जाती हैं। मुंशी खैरातीलाल बीड़ी मुँह मे दबाये बाहर की खिड़की के पास खड़े सड़क की ओर देख रहे हैं ! चेहरे पर विचारों की उलझन है। कुछ हटकर माइकिल सिर झुकाये**]

माइकिल : (**ऊँचे स्वर में**) मैंने जो भी किया, मुंशी जी उसके लिए मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ। सच कहता हूँ मैं बहुत ही शर्मिन्दा हूँ ! (**सिर उठाकर**) पर आप भरोसा कीजिए मैं लाचार था—बहुत लाचार (**काँपते स्वर में**) भूख और ग़रीबी से घबराकर ही मैंने यह सब किया था। मुंशी जी...आप किसी भी तरह वकील साहब को यह सब समझा दीजिएगा !

मुंशी : (**बीड़ी की दो-तीन कश खींचते हैं पर बीड़ी बुझी है ! उसे खिड़की से बाहर फेंककर**) माइकिल, वकील साहब ने एक बार मुझे बतलाया था कि दुनिया में आधे से ज्यादा लोग ज़िन्दगी भर, भर पेट खाना नहीं खा पाते। (**घूमते हुए**) उनमें से शायद मैं भी हूँ, तुम भी हो; पर भूख से घबराकर तुम्हारी तरह सभी लोग तो नहीं गिर जाते।

माइकिल : (**भावावेश में**) तो आप मुझसे अच्छे हैं, भूखे रहकर भी भले आदमी बने रहने वाले सभी मुझसे अच्छे हैं। (**रुककर**) पर वे सब मुझ जैसे लाचार भी हैं—ये मैं नहीं जानता। (**साँस लेकर मुंशी जी के पास आते हुए**) इसके बाद भी मुझे लगता है कि

मुझ जैसा बुरा करने वाले भूखों में कम हैं। (**मुंशी जी की आँखों में देखकर**) ज़्यादा बुरा काम करने वाले वहाँ है जहाँ तबियत से ज़्यादा खाना मिलता है। (**कुछ क्रुद्ध होकर**) मुझसे जिसने बुरा काम कराया है, वह भूखा नहीं रहता। (**तेज़ी से**) उसका कोई साथी भूखा नहीं रहता।

मुंशी : (**गंभीरता से**) ये तो मैं भी जानता हूँ माइकिल ! भूख ही मारती है और भूख ही ज़िलाती है—मुझे भी मालूम है। पर दुनिया भर की भलमनसाहत का ठेका हमने तो लिया नहीं है हमें तो अपने कामों में भले-बुरे का ख्याल रखना चाहिए।

माइकिल : (**साँस लेकर**) मैं भी यही सोचता था मुंशी जी, पर एक बार भूल कर गया और लाला ने मेरी उसी एक भूल को अपना हथियार बना लिया।

मुंशी : (**स्नेह से**) ऐसी कौन सी थी वो पहिली भूल ?

माइकिल : लाचारी थी, और वही लाचारी मेरी भूल बन गई (**बाहर की खिड़की की ओर बढ़ते हुए भावुकता से**) वो भी एक शाम थी मुंशी जी, पर अँधेरा कुछ ज़्यादा था। मेरा बड़ा लड़का डॉनी बहुत बीमार था ! छोटे डाक्टर ने कह दिया था कि उसे बचाने की ताक़त उसके पास नहीं। मेरे पास दो ही रास्ते थे—कुछ रुपये और खर्च कर बड़े डाक्टर को बुलाना या ईश्वर से दुआ माँगना ! (**करुण होकर**) रुपये मेरे पास थे नहीं...

मुंशी : ऐसे मौके पर तो मैं अपने वकील साहब से मनमाने रुपये ले लेता हूँ। उस समय तो तुम लाला के ड्राइवर थे न ?

माइकिल : (**सिर हिलाकर उसी धुन में**) था। पर लाला, वकील साहब नहीं हैं ! तनख्वाह लिए मुझे पाँच ही दिन हुए थे ! वहाँ तनख्वाह लेने के बाद सिर्फ तनख्वाह ही मिलती है बीच में चवन्नी भी

नहीं मिल सकती। हाँ, कुछ खास काम होते हैं लाला के पास, उनके करने पर मोटी-मोटी इनामें ज़रूर मिलती हैं। मैं तब तक इनामों से बचा था। उस शाम मुझे इनामी काम सौंपा भी गया था जिसके लिए मैं नाहीं कर आया था। (**साँस लेकर मुंशी जी की ओर देखकर**) तो रुपयों की उम्मीद नहीं थी! बस ईश्वर की दुआ का सहारा था.....।

मुंशी : (**गंभीर होकर**) माइकिल, ईश्वर और उसकी प्रार्थना पर कभी मुझे भी भरोसा था, पर अब तो ऐसा लगने लगा है कि यह सब मन को धोखा देने के सिवा और कुछ नहीं।

माइकिल : मुझे तो ईश्वर की दुआ पर भरोसा था और है भी। यही भरोसा लिए मैं बीमार डॉनी के पलंग के पास खड़ा था! (**धीमे स्वर में**) खड़े-खड़े मुझे स्कूल में पढ़ी एक कहानी याद आई। (**रुककर**) एक बार शाहजादा हुमायूँ बीमार पड़ा था तो उसके पलंग के पास खड़े होकर बाबर ने खुदा से दुआ माँगी थी कि उसकी जान लेकर हुमायूँ की जान बख्श दी जाये। कहते हैं (**उत्तेजित होकर मुंशी जी की ओर बढ़ते हुए**) खुदा ने बाबर की सुन ली थी। पर (**करुण होकर**) मैं...मैं ऐसी दुआ कैसे माँगता। (**साँस लेकर**) हुमायूँ तो बाबर के मरने के बाद बादशाह हुआ था और मेरा डॉनी तो मेरे ....बाद....मेरे बाद अनाथ हो जाता।.....(**भावुकता से**) बीमारी और अनाथ.. (**मुंशी जी की आँखों से आँखें मिलाकर**) मैं....मैं प्रार्थना से से भी डर गया।

मुंशी : (**माइकिल के कंधे पर हाथ रखकर**) फिर तुमने क्या किया माइकिल।

माइकिल : (**एक ओर बढ़ते हुए**) बचा ही क्या था सोचने और करने को। भागा-भागा आया लाला के पास और इनामी काम के लिए

अपने आपको उनके हवाले कर दिया। (**रुककर**) उन्होंने बड़े डाक्टर को फ़ोन कर दिया और मुझे अपने एक आदमी के साथ (**चिढ़कर**) मुस्कुराकर भेज दिया । (**साँस लेकर विचारों में खोया सा**) मैं एक नयी कार चला रहा था और कार उस आदमी के इशारों पर चक्कर काट रही थी। उसी के इशारों पर मैं कार के लाइट जलाता-बुझाता और रफ़्तार घटाता-बढ़ाता । एक मोड़ पर एक पैदल जवान रोशनी में चमका—और मेरे पास से इशारा हुआ ! रफ़्तार तेज़ हुई .....लाइट बुझे और.....(**माइकिल चीख पड़ता है**).....मैंने भी उसकी चीख सुनी.....कार के पहिये भी कुछ चीखे और ब्रेक भी चीखकर ढीले हो गये। (**रुककर**) मैं जब घर आया तो डॉनी की हालत सुधर रही थी, उधर—मैंने सुना कि अस्पताल में उस घायल जवान की हालत बिगड़ रही थी । डॉनी दो दिन बाद बिस्तर से उठकर दौड़ने लगा—और वह जवान भी.....(**करुण होकर**)अस्पताल से हमेशा के लिए उठ गया.....! (**सिर झुक जाता है**)

मुंशी : (**समझते हुए**) तो तुमने अपने बेटे के लिए दूसरे की जान ले ली !

माइकिल : पहिले मैंने भी यही सोचा था, पर मुंशी जी धीरे-धीरे मैंने महसूस किया कि दुनिया में यही होता है। सब यही करते हैं। मैंने भी वही किया था—क्योंकि मैं ईश्वर नहीं था—आदमी था।

मुंशी : (**गहरी साँस लेकर**) हूँ ! तो इस एक भूल ने तुम्हें हमेशा के लिए इस लाला का ग़ुलाम बना दिया। (**उत्तेजित होकर**)और उसके बाद तुमने न जाने कितनों की ज़िन्दगी तबाह कर डाली । (**भावुक होकर**) काश तुम वो पहिली भूल न करते.....तो आज मेरे वकील साहब.....

माइकिल : (**व्याकुल होकर**) मुंशी जी क्यों कुरेद रहे हैं मेरे नासूर को। (**रुककर**) आज कितना पछता रहा हूँ शायद आप अभी भी नहीं समझे !

मुंशी : (**दबे व्यंग्य से**) अगर लाला ने नौकरी न ली होती तो शायद यह पछतावा तुम्हें न होता।

माइकिल : (**बाहरी खिड़की के पास दीवार से टिककर**) अपने बुरे कामों के लिए मैं हमेशा पछताया हूँ.....मुंशी जी मेरा मन तो ज़िन्दा था न ! पर क्या करता, हाथ बेच चुका था, इज़्ज़त लुटा चुका था और ज़िन्दगी गिरवी रख चुका था, बचता कैसे ? (**रुककर**) आज पछतावे का सबब दूसरा है ! (**धीरे-धीरे**) जिसके लिए इन्सान से हैवान बना था उसी ने धोखा दिया ! (**व्यथित स्वर में**) अब उन्हीं लाला को मुझपर भरोसा नहीं क्योंकि इस बार वे ख़ुद भी फँस गये हैं !

मुंशी : मेरा ख़्याल है माइकिल कि लाला के लिए—तुम-मैं-सब-बराबर हैं। अपने मतलब के लिए वे किसी को भी अपने रास्ते से साफ़ कर सकते हैं।

माइकिल : (**धीरे-धीरे**) आपकी बात मुझे सच लग रही है मुंशी जी। पर जो कर चुका उसे कैसे सुधारूँ !

मुंशी : वकील साहब से मिल लो.....।

माइकिल : (**व्याकुल होकर**) नहीं-नहीं मुंशी जी....मैं उन्हें कैसे मुँह दिखलाऊँ ! (**रुककर**) उनके सामने जाने की हिम्मत होती तो सारी बातें आपसे क्यों कहने आता ! (**याचना भरे स्वर में**) मेरी तरफ़ से उन्हें समझा दीजिए न.....और कहिए (**भरे गले से**) और कहिए कि नीच माइकिल को माफ़ कर दें !

मुंशी : (**माइकिल को पकड़कर स्नेह से**) माइकिल मैं वकील साहब

को जानता हूँ वे देवता नहीं—ये भी जानता हूँ, पर वे सच्चे आदमी हैं इस पर मेरा विश्वास है ! (**रुककर**) बदला लेने की बात वे भी सोच सकते हैं, उन्हें भी क्रोध आता है, पर मुझे लगता है कि तुम्हारी लाचारी समझकर वे तुमपर नाराज़ नहीं होंगे.....और न तुमसे बदला ही लेंगे...! माइकिल तुम मिल लो..... ..!

माइकिल : नहीं-नहीं मुंशी जी मुझमें हिम्मत नहीं ! मुझें उनसे मिलने को न कहिए ! (**याचना भरे स्वर में**) बस, मुझे उनसे माफ़ी दिला दीजिए ! (**रुककर**) मुझे कोर्ट-कचहरी का डर नहीं ! सज़ा काटने को तैयार हूँ मैं...

मुंशी : (**दृढ़ता से**) सज़ा तुम क्यों काटोगे ! (**कालबेल बजती है**) लीजिए कोई आ गये।

माइकिल : तो मुझे जाने दीजिए। मैं आपसे कल फिर मिलूंगा। आप वकील साहब से बातें कर लीजिएगा।

मुंशी : बात तो मैं आज ही उनसे कर लूंगा। फिर भी मैं चाहता था (**कालबेल फिर बजती है**) कोई साहब घोड़े पर सवार मालूम होते हैं। (**दरवाज़े की ओर बढ़कर**) आ जाइये !

[लाला धरमदास का प्रवेश ! उन्हें देखकर माइकिल और माइकिल को देखकर धरमदास चौंकते हैं और ठिठक जाते हैं।]

मुंशी : ओ ! आप हैं लाला जी (**व्यंग्य से**) हुकुम दीजिए क्या सेवा करूँ ! (**उनकी निगाहें ताड़कर**) यहाँ माइकिल भी हैं जो कल तक आपके ड्राइवर थे।

धरम : (**बैसाखी सँभालते हुए—कुछ क्रोध से**) मैं देख रहा हूँ ! पर ये आया क्यों ?

[माइकिल कुछ कहना चाहता है पर मुंशी जी इशारे से रोक देते हैं।]

मुंशी : लाला जी, यह एक वकील का आफिस है। यहाँ हर आदमी आ सकता है।

धरम : (**तेज़ी से चलते हुए**) तो ये भी सलाह लेने आया है!

मुंशी : (**मुस्कुराकर**) जी हाँ! बात कुछ ऐसी ही है।

धरम : (**क्रोध से घूमकर**) देखता हूँ कैसे मिलती है इन्हें सलाह। (**रुककर**) वकील साहब को सलाह देने के पाँच सौ दे रहा था अब इसे सलाह न देने के हज़ार दूंगा!

मुंशी : (**कुछ उत्तेजित होकर**) लाला जी आप हमारे वकील साहब को नहीं जानते

[**फ़ोन की घंटी बजती है। मुंशी जी बढ़कर रिसीवर उठाते हैं**]

धरम : मैं वकीलों को जानता हूँ मुंशी जी.....

मुंशी : (**रिसीवर पर अनजाने**) आप ख़ाक जानते हैं। (**चौंककर**) जी माफ़ कीजिए—आप से नहीं कह रहा! यहाँ दूसरे साहब से.....जो नहीं.....वकील साहब अभी नहीं मिल सकते। कल सवेरे आइएगा! (**रिसीवर रखकर**) लाला जी मुझे आपके ख्यालों पर तरस आ रहा है।

धरम : हूँ, मैं जो कह रहा हूँ अपने तजर्बे से कह रहा हूँ! वकील रुपयों से खरीदे हैं मैंने.....

मुंशी : (**क्रोध दबाते हुए**) लाला जी सब वकील एक से नहीं होते।

धरम : (**चालाकी से**) जब सब आदमी एक से नहीं होते तो सब वकील भी एक से नहीं हो सकते (**रुककर**) मैं तो खुद ही परेशान हूँ आपकी बात सुनकर।

मुंशी : (**आश्चर्य से**) मेरी बात सुनकर आप को क्या परेशानी हो गई?

धरम : आपके कहने का मतलब था कि वकील साहब साईकिल का केस लेंगे.....मेरा नहीं। ये तो बड़े मामूली वकीलों की बात हुई। अच्छे वकील इस तरह रुख़ नहीं बदलते...मुझे इसीलिए

आपकी बात ने परेशान कर दिया। (**बाहर की खिड़की की ओर आकर**) रुपयों की बात तो मैं ताव में कह गया था। दरअसल मुझें इस पर भरोसा नहीं हो रहा है।

माइकिल : लालाजी अब आप अपनी चालाकी रहने दीजिए।

धरम : (**तेज होकर**) तुम्हारी ज़बान भी खुलने लगी ! माइकिल ये मत भूलो की तुम्हारी ज़िन्दगी के टुकड़े मेरे ही अहसानों से जुड़े है !.....मुझसे उलझकर पछताओगे !

माइकिल : आपका साथ दिया इसीलिए तो पछता रहा हूँ।

धरम : साथ छोड़कर ज़्यादा पछताओगे। माइकिल यह मत भूलना कि तुम्हारे रंगे हाथ आज भी मेरे बस्ते में बँधे हैं। तुम बच नहीं सकोगे। वह दिन आयेगा जब तुम फिर मेरे सामने आकर रोओगे, गिड़गिड़ाओगे। जब वकीलों की फ़ीस, खानदान को रोटी तुम्हें तोड़ देगी तब तुम अपने किये पर पछताओगे.....।

[माइकिल उत्तेजित होता है—मुंशी जी रोक देते हैं]

मुंशी : लाला जी आपके काफ़ी अहसान हैं, माइकिल पर, अब दूसरों की फ़िकर कीजिए ! यह तो अपने किये का फल पायेगा ही !

धरम : (**हँसकर**) मुंशी जी आपकी चालाकी पर मैं आपको दाद देता हूँ। (**घूमते हुए**) पर मैं कहे जाता हूँ कि मैं अनाड़ी नहीं पुराना खिलाड़ी हूँ ! (**बाहर होते हुए हँसी के साथ**) दुश्मनी मेरी आदत नहीं, मैं तो शिकार भी मोहब्बत से करता हूँ। खैर फिर आऊँगा—वकील साहब से तो मिलना ही है। (**प्रस्थान**)

माइकिल : (**तेज साँस लेते हुए**) आपने बेकार रोक लिया मुझे। (**रुककर**) ज़्यादा क्या होता एक फौजदारी का मुकदमा और बढ़ जाता मुझ पर।

मुंशी : पर बात बिगड़ जाती है ! (**मोटर का हार्न सुनाई देता है जो क्रमशः दूर होता जाता है**) दिखता है कोई दूसरा ड्राइवर आ गया ड्यूटी पर।

माइकिल : मुंशी जी आफ़त के मारे सैकड़ों माइकिल आपको मिल जायेंगे। (**रुककर**) देखना ये है कि कितने दिन टिक पाता है बेचारा ! तो मैं जाऊँ.... !

[**माइकिल मुंशी जी की ओर देखता है इसी समय तेजी से माधवी प्रवेश करती है।**]

माधवी : (**घबराये स्वर में**) मुंशी जी भैया कहीं गये क्या? (**माइकिल को देखकर**) पर माइकिल तो यहीं है.....और कार ?

मुंशी : (**चश्मे में से झाँककर शरारत से**) कार तो चली गई। यहाँ माइकिल बेकार है। (**माधवी की मुद्रा देखकर मुस्कुराते हुए**) पर भैया नहीं गये, कमरे में है ! कुछ देर पहिले मैं उनके पास गया था तो आपकी पद्मा उनके पैर चाट रही थी !

माधवी : (**गहरी साँस छोड़ कर**) हूँ ! तो ये कार किसकी गई।

मुंशी : कार तो लाला धरमदास की ही थी.....पर माइकिल अब उनके ड्राइवर नहीं रहे ! (**माधवी माइकिल को देखती है माइकिल सिर झुका लेता है**) माइकिल ने आजकल रास्ता बदल दिया है !.....

माइकिल : (**बचते हुए**)....अब मुझे जाने दीजिए मुंशी जी !....कल फिर मिलूँगा आपसे !....देखिए मेरी बात का ख्याल रखिएगा ! सलाम ! दीदी जी सलाम.....(**प्रस्थान**)

माधवी : (**माइकिल को जाता देखकर**) माइकिल कुछ घबराया लगता है।

मुंशी : आजकल हर भला आदमी घबराया लगता है। (**अपनी टेबल की ओर बढ़ते हुए**) हाँ, आप अपनी सखी को फ़ोन कर

दीजिए कि जल्दी आ जाये। (**रुककर**) भैया ने कहा है कि आज मिलेंगे।

माधवी : (**फ़ोन की ओर बढ़ती हुई**) रात हो गई तो हॉस्टल से आ भी नहीं पाएगी।

मुंशी : वो तो मामूली बात है, यहाँ भैया का मूड बदलते भी तो देर नहीं लगती ! (**अपनी टेबल पर के काग़ज़ उलटते हुए**) आप फ़ोन कीजिए तब तक मैं भैया से कुछ और बातें कर आता हूँ माइकिल की बातों का बोझ उतारना है—और वे भी कमरे में अकेले ऊब रहे होंगे।

[मुंशी जी कुछ और कहना चाहते हैं पर हाथ में रिसीवर लिए माधवी उन्हें संकेत से चुप कर देती है।]

माधवी : (**फ़ोनपर...**) हलो ! जी मैं माधवी.....नमस्ते। आपको एक तकलीफ़ देनी थी...! गाथा को ख़बर दे दीजिए.....चली गई कहाँ... ! मेरे घर के लिए चल पड़ी.....तो फिर पहुँचती ही होगी।.....बहुत-बहुत धन्यवाद ! नमस्ते (**रिसीवर रखकर**) वार्डन तो कह रही है कि गाथा चल पड़ी है।

मुंशी : तो ठीक है—आती ही होगी। (**कालबेल बजती है**) ये लीजिए फिर कोई साहब टपक पड़े, (**अन्दर की तरफ बढ़ते हुए**) बिजली ही बन्द कर देता हूँ फिर देखता हूँ किसकी घंटी बजती है (**चिढ़कर**) नाक में दम है इन आने-जाने वालों के मारे, काम करना ही मुश्किल है।

माधवी : (**हँसकर**) कितनी देर बंद रखेंगे बिजली ! कुछ देर बाद अँधेरा हो जाएगा तब ? (**आगे बढ़ते हुए**) वकील के पास तो लोग आते ही रहते हैं इसमें कौन-सी अनहोनी बात है जो आप खीझ रहे हैं !

मुंशी : (**ऊँचे स्वर में**) बाहर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा है

कि मिलने का समय सिर्फ सबेरे है। फिर भी (**कालबेल बजती है। चिढ़कर**) फिर भी लोग दम नहीं लेने देते, देखा आपने किस तरह बेचैन हैं। मुझे भैया से जरूरी बातें करना है और (**कालबेल बजती है। मुंशी जी की भौंहें तन जाती हैं**) ये लोग जान लेने पर तुले थे! पहिले धरमदास आये और अधरम की बातें सुना गये। अब पता नहीं कौन दयासागर आये हैं (**ज़ोर से**) कौन साहब है आ जाइये।

[**प्रसन्न होने का प्रयत्न करते हुए भूषण का प्रवेश। वे मुंशी जी से कुछ कहने को उद्यत होते हैं पर माधवी पर निगाह पड़ते ही ठिठक जाते हैं। नमस्ते के लिए हाथ उठ जाते हैं और पैर थम जाते हैं माधवी भी मौन में नमस्ते का उत्तर देती है।**]

मुंशी : (**रूखे स्वर में**) कहिए, भूषण जी कैसे कष्ट किया?

भूषण : (**सँभलते हुए**) यों हीं.....। बस वकील साहब के दर्शन करना था.....।

मुंशी : (**उसी रूखेपन से**) आप जानते हैं कि यह समय उनसे मिलने का नहीं है।

भूषण : (**चालाकी से**) मैं जानता हूँ। पर लाला धरमदास आते दिखे थे, इसलिए मैंने सोचा कि मैं भी कोशिश कर लूं।

मुंशी : आप ये नहीं जानते कि मैंने उन्हें वकील साहब से नहीं मिलने दिया।

भूषण : ये तो बहुत अच्छा किया आपने। ऐसे लोगों से मिलने में वकील साहब का समय बेकार जाता है। (**खुशामद के ढंग से**) आपने बड़ी समझदारी से काम लिया।

माधवी : (**मुंशी जी के बोलने के पूर्व**) ये आप कैसे कह सकते हैं कि उनसे मिलने में भैया का समय बेकार जाता!

भूषण : (**कुछ गड़बड़ाकर**) मैं उन्हें जानता हूँ!

मुंशी : (**चश्मा साफ करते हुए**) मैं उन्हें भी जानता हूँ और आपको

भी । इसलिए मेरा ख्याल है कि आपसे मिलने में भी वकील साहब का समय बेकार जाएगा।

भूषण : (**माधवी से**) अब आप ही समझाइए इन्हें । मुझे तो वकील साहब से बड़ा ही ज़रूरी काम है।....**मुझे कल अपने** शहर लौटना भी है। (**दीन भाव से**) मुंशी जी आप वकील साहब से पूछ रखिए। तब तक **मैं** रुकता हूँ !

माधवी : मुंशी जी ये बात ठीक है। आप **भैया** से बातें करने जा ही रहे हैं। उनसे पूछ लीजिए--यदि **मिलना** चाहेंगे तो ठीक है वर्ना भूषण जी लौट जायेंगे।

मुंशी : और तब तक भूषण जी कहाँ रहेंगे ?

माधवी : (**हँसकर**) यहीं आफिस में। क्यों आपको कोई आपत्ति है ?

मुंशी : (**संदेह भरे स्वर में**) ये....और अकेले ? हमारे आफिस में ? हरगिज़ नहीं....मैं कहता हूँ यह नहीं हो सकता (**भूषण माधवी की ओर याचक की दृष्टि से देखकर सिर झुका लेते हैं**)

माधवी : (**हँसकर**) आप चिन्ता न कीजिए। मैं भी यहाँ रुक जाऊँगी। आप भैया से बातें कीजिए। कहीं ऊबकर चल न दें।

मुंशी : ये ठीक है ! (**घूमते हुए**) भूषण जी, यहाँ का कोई कागज़ आप नहीं देखेंगे। यहाँ की किसी चीज़ को आप नहीं छुएँगे..... यह याद रहे। (**भूषण तिलमिलाकर शांत हो जाते हैं**)

माधवी : (**उसी स्वर में**) आप जाइये न मुंशी जी। मैंने कह तो दिया, मैं यहाँ रहूँगी। यहाँ की सारी चीज़ों की ज़िम्मेदारी मेरी है।

मुंशी : (**साँस लेकर**) चलिए मेरा बोझा तो उतरा। (**चश्मे से भूषण की ओर घूरते हुए प्रस्थान**)

भूषण : (**गहरी साँस छोड़ते हुए**) आपके मुंशी जी भी एक ही आदमी हैं।

माधवी : (**शरारत से**) मेरे मुंशी नहीं, भैया के.....।

भूषण : (**कटकर**) जी वही मतलब था मेरा। देखिए न आपके और उनके व्यवहार में कितना अन्तर है। (**खुशामद के ढंग से**) ये तो आपका और आपके भैया का अपनापन है जो हम जैसे लोगों को यहाँ खींच लाता है। यदि यहाँ सभी लोग मुंशी जी जैसे ही होते तो शायद इस ओर कोई देखता भी नहीं।

माधवी : (**हँसकर**) मुंशी जी से बड़े नाराज़ मालूम होते हैं आप।

भूषण : जी नाराज़ी से ज्यादा बात तरस खाने की है। (**रुककर**) जब भले आदमियों के साथ रहकर भी कोई आदमी भलमनसाहत नहीं सीख पाता तो मुझे उसपर तरस आता है।

माधवी : भूषण जी, आज भले और भलमनसाहत की परिभाषा बड़ी ही कठिन हो गई है—इसलिए इस विषय पर मैं आपसे चर्चा नहीं करूँगी। मुझे तो संतोष इस बात का है कि आपको हम लोगों से कोई शिक़ायत नहीं। (**माधवी वाक्य पूरा करते-करते भूषण की ओर देखती है**)

भूषण : (**माधवी की ओर देखते हैं—आँखें मिलते ही माधवी का सिर झुक जाता है**) आपसे शिक़ायत कर हम कहाँ जायेंगे।

माधवी : (**स्वस्थ होकर**) आप तो यह वाक्य इस तरह कह गये जैसे इसके पहिले भी कई बार कह चुके हैं।

भूषण : (**घबराकर**) जी.....जी.....नहीं.....।

माधवी : (**अचानक हँसकर**) अच्छा ये बतलाइए कि गाथा से तो आपको शिक़ायत है न?

भूषण : (**हँसने की कोशिश करते हुए**) जहाँ कोई सुनने वाला ही न हो वहाँ शिक़ायत की किससे जाये। (**चालाकी से**) आपकी सखी बड़ा नाप-तौल कर सुनती हैं।

माधवी : अगर आपको उनके नाप-तौल कर सुनने पर आपत्ति है तो आप खुद ही नाप-तौल कर बोला कीजिए।

भूषण : (**बाहर की खिड़की की ओर बढ़ते हुए**) इस नाप-तौल कर मिली ज़िन्दगी में क्या-क्या नापा-तौला जाये.....मेरी समझ में तो नहीं आता। (**घूमते हुए**) जो समझते हैं उनसे पूछ लूंगा ! (**सिगरेट निकालते हुए**) आज्ञा है ?

माधवी : मुझे आपत्ति नहीं। (**शरारत से**) नपी-तुली ज़िन्दगी में ये पूंछ-पाँछ भी ठीक नहीं ! (**भूषण की मुद्रा देखकर अचानक**) दिखता है मेरी सखी इसका विरोध करती है।

भूषण : (**सिगरेट सुलगाने के प्रयत्न में भाव छिपाकर**) आपकी सखी विरोधों की ही बनी है !

माधवी : (**अरूप की टेबल का सहारा लेकर**) गाथा विरोधों की बनी है? (**हँसकर**) आपकी बात भी बिखरी-बिखरी लग रही है। नाप-तौल कर रखिए।

भूषण : (**कुछ झेंप कर**) आपने तो मेरा एक शब्द पकड़ लिया.....।

माधवी : (**हँसकर**) अगर आप बुरा मान गए तो लीजिए छोड़ दिया मैंने शब्द। (**रुककर**) अब अपनी बात साफ़ कहिए।

भूषण : (**सिगरेट का कश लेकर**) उनके स्वभाव में बड़ी ही विरोधी बातें एक साथ घर किये हैं (**सिगरेट की राख झाड़कर**) पर वह साधारण बात नहीं। मन से एक चीज़ का विरोध, ऊपर से उसका स्वागत, उधर दूसरी चीज़ का मन से स्वागत और ऊपर से विरोध (**सिगरेट मुँह में लगाते हुए**) आपने भी अनुभव किया होगा।

माधवी : (**टालते हुए**) मेरे अनुभव आपके काम तो आयेंगे नहीं। हाँ, वह बात अवश्य है कि गाथा, उथली नहीं गहरी है। उसे समझना सरल नहीं।

भूषण : (**भाव बदलकर**) बस-बस आपने पते की बात कह दी।

वे सचमुच बहुत गहरी हैं। (**रुककर**) मैंने भी अनुभव किया है। उनकी गहराई का तो मुझे पता नहीं पर उस गहराई में छिपे रहस्य का पता मैंने लगा लिया है।

माधवी : आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई। बिना गहराई जाने आप गहराई की बात कैसे जान गये ?

भूषण : (**हँसकर**) यह भी रहस्य है जो आपको मैं बतलाऊँगा। यही रहस्य मैं वकील साहब को भी बतलाना चाहता हूँ। (**रुककर**) उस रहस्य के सामने आते ही बड़ी-बड़ी बातें सामने आयेंगी !

माधवी : दिखता है उन रहस्यों से आपका भी संबंध है।

भूषण : (**कुछ चौंककर**) मेरा.....मेरा....क्या संबंध होगा। मैं तो दर्शक हूँ। तट पर खड़ा दर्शक, जो हर लहर का उठना, गिरना, सिर पटकना देखता है और दूर रहता है।

माधवी : (**शरारत से**) तो जिस तट पर आप खड़े हैं वहाँ की सारी लहरें पहिचान गये ?

भूषण : उसी प्रयत्न में तो यहाँ तक आया हूँ।

माधवी : (**बनावटी भोलेपन से**) यहाँ तक ? याने इस शहर तक ?

भूषण : (**अटपटाकर**) जो भी समझें आप.....(**माधवी हँस पड़ती है**) आप भी खूब हैं।

माधवी : गाथा की सहेली जो हूँ.....(**अचानक कॉलबेल बजती है। भूषण का ध्यान उस ओर जाता है। माधवी दरवाजे की ओर बढ़ती है।**) आप रुकिये मैं देखती हूँ।

[**भूषण सिगरेट का आखिरी कश खींचकर सिगरेट फर्श पर गिराकर पैरों से बुझाते हैं और उत्सुकता से बाहर के दरवाजे की ओर देखने लगते हैं। माधवी दरवाजे से बाहर**

निकल जाती है। उसके बाद नेपथ्य से माधवी की आवाज़ आती है—"अच्छा तो तुम हो। कॉलबेल बजाने रुक गई.....बड़ा शिष्टाचार सीखती जा रही हो....। चलो न अन्दर.....वे भी हैं" (हँसी) भूषण घबराकर दरवाज़े की ओर बढ़ते हैं।]

माधवी : (गाथा का हाथ पकड़कर खींचते हुए) ये आई हैं। देखिए क्या मौके से आई हैं। (हँसकर) कहीं आप दोनों ने यहाँ मिलने का कार्यक्रम तो नहीं बनाया था। (गाथा की आँखों में देखकर) आज पद्मा की माँ ने भी तुम्हें नहीं छेड़ा—उसे भी इस कार्यक्रम का पता था क्या ?

[गाथा और भूषण एक दूसरे को देखकर सहम जाते हैं। माधवी के चेहरे पर शरारत छा जाती है।]

माधवी : (झटके से गाथा का हाथ छोड़कर) मैं चली जाऊँ ?

गाथा : (दृढ़ स्वर में) इनसे जाने को कह दो।

भूषण : (व्यंग्य से) यदि आप ही कह दें तो भी मैं चला जाऊँगा। अब तो मैं इसे आपका ही घर समझने लगा हूँ। (सिगरेट निकालते हुए) मालकिन की आज्ञा सर आँखों पर।

[माधवी कुछ आश्चर्य से दोनों की ओर देखती है। गाथा के चेहरे पर क्रोध बढ़ता ही जाता है।]

गाथा : (तेज स्वर में) भूषण ! अपनी सीमाओं का ध्यान रखो।

भूषण : (सिगरेट सुलगाते हुए) अपनी सीमाओं का ही पता चल गया होता तो इस असीम संसार में मैं भटकता क्यों ?

माधवी : (गाथा के बोलने के पहिले) गाथा.. .क्या बात है ? मैं समझी नहीं।

भूषण : (कश खींचते हुए) कुछ देर पहिले मैंने आपसे रहस्य वाली बात कही थी.....बस वही सिलसिला है। (गाथा की

ओर घूमकर) आपने अपनी सहेली को गहरी कहा था– (**माधवी की ओर घूमकर**) आपके लिए ये गहरी थी और शायद हैं भी.....पर मैंने तो आपसे कहा था कि मैं इनकी गहराई में छिपे रहस्य जानता हूँ । (**हँस पड़ता है**) गहराई और रहस्य.....।

गाथा : भूषण ! मेरे रहस्यों में तुम्हारी नीचता भी छिपी है यह क्यों भूलते हो । मेरे रहस्यों के खुलने के साथ तुम्हारी सज्जनता भी अनाथ हो जायेगी ।

भूषण : (**सिगरेट की राख झाड़कर**) गाथा ! पुरुष की नीचता का ढोल स्त्रियों ने सदा से पीटा है—तुम्हें मैं अपवाद नहीं मानता (**माधवी की ओर घूमकर**) पर जब इनके रहस्य सामने आयेंगे तो आप सब इनसे खिंच जायेंगे ।

माधवी : रहस्यों को मैं मित्रता का आधार नहीं मानती ।

भूषण : फिर भी कुछ ऐसी बातें तो आपको जानना चाहिए ।

माधवी : (**चिढ़कर**) जितना मैं जानती हूँ उतना ही मेरे लिए बहुत है ।

गाथा : नहीं मधु, सुन लो, इनके मुँह से सुन लो जिससे तुम यह समझ जाओ कि स्वार्थ के लिए एक शिक्षित मनुष्य कहाँ तक गिर सकता है ।

माधवी : (**शीघ्रता से**) गाथा, मुझे तुम लोगों की ये चिकचिक अच्छी नहीं लग रही है ।.....और अगर यह सब मुझे दिखलाने के लिए भी है तो भी मुझे नहीं देखना । (**घूमते हुए**) मैं अन्दर जाती हूँ ।

गाथा : नहीं मधु तुम मत जाओ ।

भूषण : मैं भी चाहता हूँ कि आप न जायें ।

गाथा : हाँ मधु, मनुष्य की नीचता पूरी तरह देख लो तब जाना।

भूषण : (**क्रोध से सिगरेट फर्श पर पटककर कुचलते हुए**) गाथा, मेरे धैर्य की सीमा हो रही है।

गाथा : (**चिढ़कर**) तुम्हारी सीमाएँ आज टूट भी जायें, तो भी मुझे चिन्ता नहीं।

माधवी : (**अन्दर जाते हुए**) मैं....मैं.....यहाँ नहीं रुक सकती..... मैं भैया को ही भेजती हूँ। वे ही आप लोगों की सीमाओं पर सिर पटकेंगे..... (**प्रस्थान**)

गाथा : (**दरवाजे के पास आकर**) रुको मधु.....! (**घूमकर**) देखा, तुम्हारी नीचता से मधु भी ऊब गई।

भूषण : (**शांत होकर व्यंग्य से**) पर तुम्हारे देवत्व को अभी भी पूज रही है.....यही कहना चाहती हो न ? (**रुककर**) गाथा समझदारी से काम लो। संधि में ही विजय है।

गाथा : (**क्रोध से**) संधि और तुमसे ! भूषण मैं कई बार कह चुकी कि यह असंभव है। यह मेरा पुराना हठ है।

भूषण : (**चालाकी से**) पुरानी कौन सी चीज़ रही है, जो अब तक पुराना हठ ढो रही हो। (**गाथा की ओर बढ़ते हुए**) मैं जानता हूँ यह सिर्फ हठ है जिसका आधार कोई कोमल भावना नहीं।

गाथा : यह तुम कैसे कह सकते हो ?

भूषण : मैं तुम्हारे मन को समझता हूँ गाथा ! तुम्हारा मन सहारा चाहता है। (**रुककर**) तुम कभी मुझसे नाराज़ थी ठीक है, आज नाराज़ नहीं हो, पर उस पुरानी नाराज़ी का हठ लादे हुई हो इसलिए मेरा सहारा छोड़कर किसी फोटो के सहारे का ढोंग रच रही हो।

गाथा : (**चिढ़कर**) फोटो के सहारे का ढोंग रच रही हूँ मैं।

भूषण : और क्या जो स्वयं तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर पाया उसकी फोटो तुम्हारे लिए क्या करेगी । (**गाथा की क्रोध भरी मुद्रा देखकर**) देखो ठंडे मन से मेरी बात को सोचो ! (**सिगरेट निकालते हुए**) गाथा फोटो के सामने हँसने-रोने से चाहे क्षणिक शांति मिल जाये पर फोटो जीवन को सहारा नहीं दे सकती । तुम पर होने वाली आलोचनाओं का उत्तर भी फोटो नहीं दे सकती । (**सिगरेट जलाते हुए**) फोटो जला सकती है। वह न जीवन की आवश्यकताएँ पूरी कर सकती है न इच्छाओं को शांत कर सकती है। (**कश खींचकर धुआँ गाथा की ओर छोड़कर है ।**) धुआँ । धुआँ बनाकर रहेंगी तुम्हें ये इच्छायें (**व्यंग्य से**) अगर तुमने हठ न छोड़ा तो !

गाथा : (**चिढ़कर**) तो इसमें तुम्हारा क्या नुक़सान होगा ।

भूषण : (**साँस लेकर**) मेरा ही तो नुक़सान होगा । मेरी सारी भावनायें तो तुमपर टिकी हैं । मुझे तो उनकी चिन्ता भी है (**घूमकर**) अगर कहीं तुम्हें लगता है कि मुझसे भूल हुई है तो गाथा विश्वास करो वह भूल भी मेरी भावनाओं ने ही करवाई है । (**रुककर**) तुम्हारे पिता जी ने तो मुझे क्षमा कर दिया है।

गाथा : (**क्रोध से**) क्षमा किया है या तुम्हारी उन भूलों में तुम्हारा साथ दिया है । भूषण, मैं अपनी बर्बादी की कहानी अच्छी तरह समझ गई हूँ ।

भूषण : तुम्हारी समझ पर मैं केवल तरस खा सकता हूँ । (**सिगरेट फेंककर**) गाथा मैं तो चाहता हूँ कि तुम्हारा टूटा जीवन जुड़ जाये । उसे छिपाने के लिए तुम जितना संघर्ष कर रही हो उससे तुम्हें मुक्ति मिल जाए ।

गाथा : इसके लिए मुझे तुम्हारी सहायता नहीं चाहिए ।

भूषण : (**व्यंग्य से**) अच्छा तो यह अधिकार तुम किसी और को देना चाहती हो ! (**हँसकर**) क्या चेहरे ही कुरूपता की आड़ में छिपी, दिल की सुन्दरता देख ली तुमने ?

गाथा : (**चिल्लाकर**) भूषण ! मैं कुछ नहीं सुनना चाहती तुमसे। चले जाओ यहाँ से.....मैं तुम्हारा मुँह भी नहीं देखना चाहती।

भूषण : (**हँसकर**) मैं यों जाने का नहीं। मैं तो अपनी बात मनवा कर ही जाऊँगा। (**रुककर**) यदि तुम सीधे से न मानी तो मैं तुम्हारी दुर्बलता का लाभ उठाऊँगा..... (**दाँत पीसकर**) चिल्लाकर कहूँगा.....

गाथा : (**बीच में**) उसके पहिले मैं चिल्लाकर कहूँगी कि तुम खूनी हो.. ... ..खूनी हो ! हत्यारे हो।

भूषण : (**क्रोध से**) गाथा ! गाथा ! अगर अब ऐसा शब्द तुम्हारे मुँह से निकला तो मेरा धैर्य टूट जायगा.....और.....और उसके बाद... .....(**अचानक रुक जाते है।**)

गाथा : (**उसी स्वर में**) और क्या होगा उसके बाद.... .....। (**ऊँचे स्वर में**) क्या.....क्या तुम मेरी भी हत्या करोगे... बोलो ! हत्यारे भय दिखलाकर मुझे जीतना चाहता है।

भूषण : (**चिल्लाकर गाथा की ओर बढ़ते हुए**) गाथा बन्द करो मुँह...!

अरूप : (**तेजी से प्रवेश करते हुए**) भूषण ! (**भूषण घबराकर रुक जाते हैं**) (**दृढ़ स्वर में**) आप मेरे आफिस से चले जायें तो अच्छा है।

भूषण : (**हिचकते हुए**) लगता है आपने इनके शब्द सुन लिये और उन पर भरोसा भी कर लिया। पर आप नहीं जानते कि इन्होंने अपनी एक दुर्बलता छिपाने के लिए मुझ पर यह दोष लगाया है।

अरूप : (**गंभीर स्वर में**) मैं वैधव्य को न दुर्बलता मानता हूँ और

न अपराध। पर वैधव्य के पीछे यदि किसी की पशुता होती है तो उसे अपराध कहता हूँ.....(**तेज होकर**) और आपने वह अपराध किया है। (**गाथा सिर पकड़कर आरामकुर्सी पर गिर पड़ती है। भूषण का चेहरा बुझ जाता है**)..... भूषण जो, मुझे सत्य का ही पक्ष लेना होगा.....आपका केस मैं नहीं लूंगा.....।

भूषण : (**बनते हुए**) वकील साहब आप तो बातों-बातों में कानून से खेलने लगे।

अरूप : मैं जानता हूँ कि मैं क्या कर रहा हूँ। (**कुछ तेज होकर**) आप चले जाइये मैं आपका केस नहीं लूंगा।

भूषण : (**घूमते हुए**) आप पर भावना विजय पा गई है—आपकी दबी हुई इच्छाओं ने विद्रोह किया है और शायद इसीलिए आप सत्य और न्याय की ओर देखना नहीं चाहते। खैर जाता हूँ पर यह कहे जाता हूँ कि इसी आग में मैं झुलसा हूँ—आप भी जल जायेंगे.....(**जाते हुए**) कानूनी बातों के लिए तो अदालत में मिलेंगे.....(**व्यंग्य से**) नमस्ते! (**प्रस्थान**)

[अरूप भूषण को जाते देखते हैं! उसके बाद घूम-कर गाथा को देखते हैं। गाथा कुर्सी पर ऐसे टिकी है जैसे अचेत है। अरूप उसे निहार कर धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ते हैं]

अरूप : (**गहरी साँस लेकर धीर-धीरे अपनी धुन में**) असीम सुन्दरता,.....अनोखा आकर्षण.....! समीपता..... जीवन की पूर्णता.....! समीपता.....पूर्णता.....(**अचानक घूमकर** नहीं....!...नहीं, नहीं.....! (**साँस छोड़कर**) नहीं.....! ओफ़.....सुन्दरता.....!

[आहट पाते ही गाथा आँखें खोलती है और सहसा खड़ी हो जाती है। अरूप की दृष्टि फिरती है....आँखें मिलती हैं

और गाथा का सिर झुक जाता है। अरूप धीरे-धीरे बगीचे की खिड़की की ओर बढ़ जाते हैं।]

अरूप : (**खिड़की की लता को उँगलियों में नचाते हुए**) आज पहिली बार आपके दर्शन हुए..... और वो भी ऐसे अनोखे वातावरण में। (**हिचकिचाते हुए**) मधु से आपके विषय में सुन-सुनकर सोचा था कि आपसे भावना के धरातल पर मिलूंगा—और मिला कानूनी उलझनों की धार पर। (**रुककर**) दुःख इस बात का भी है कि आप का उचित सत्कार नहीं कर पाया। (**घूमकर**) सच मानिये मैं..... (**गाथा से आँख मिलते ही वाक्य अधूरा रह जाता है। गाथा का सिर फिर झुक जाता है। उधर दरवाजे से माधवी झाँकती है और दोनों की तन्मय मुद्रा परख कर मुस्कुराकर भीतर लौट जाती है**)

गाथा : (**नीचा सिर किये**) मैंने तो कई बार प्रयत्न किया पर नहीं मिल सकी आपसे।

अरूप : (**धीमे स्वर में**) जानता हूँ! मैं ही कट गया था। मुझे डर था और.....और..... (**अचानक रुक जाता है**)

गाथा : (**सिर उठाकर**) आपको घृणा भी थी....सुन्दरता से। (**बाहर की खिड़की की ओर बढ़ते हुए**) मधु जानती है मुझे कितनी घृणा है इस सुन्दरता से। (**भावुकता से**) आप शायद नहीं समझते कि मैं अपनी उलझनों के लिए इसी सुन्दरता को कोसती हूँ। (**रुककर**) इसीलिए चाहती भी थी.....अभी भी चाहती हूँ कि इससे किसी तरह छुटकारा मिल जाये।

अरूप : (**तेजी से**) आप सुन्दरता से छुटकारा चाहती हैं?

गाथा : (**भरे स्वर में**) जी हाँ! यदि मुझे सुन्दरता न मिली होती तो जीवन में इतना दुःख भी न मिलता। (**साँस लेकर**) कितना दुःख, कितना भय, कितना उपहास!

अरूप : (**पास आते हुए**) जो हो चुका, उसका रोना क्या ? (**गंभीर स्वर में**) पर मैं चाहता हूँ कि आप सुन्दरता सँजोइये, खोइये मत । (**रुककर**) मैं खोकर घुल रहा हूँ, आप खोने के लिए घुल रही है । (**साँस लेकर**) और जब घुलना ही है तो खोकर क्यों घुला जाये ।

गाथा : (**आश्चर्य से**) आ....आपको सुन्दरता से चिढ़ नहीं..... पर लोग तो कहते थे..... (**अचानक रुक जाती है और अरूप को देखती है ।**)

अरूप : (**भावुकता से**) मैंने सुन्दरता हारकर ही उससे चिढ़ना सीखा था, वैसे मैं बचपन से ही उसका पुजारी हूँ ।

गाथा : (**धीरे-धीरे**) पूजा तो मैंने भी की है। पर अब नहीं पूजना चाहती। (**रुककर**) अब तो मुझे लगता है कि कुरूपता मे ही शांति है।

अरूप : (**दृढ़ स्वर में**) नही गाथा ! शांति कुरूपता मे भी नही, (**गाथा की ओर देखकर**) अपनी कुरूपता दूसरों की इच्छायें दबा सकती है पर अपनी इच्छाये तो उसके बाद भी जीती है। और जब तक इच्छायें है शांति कैसे मिलेगी। (**साँस लेकर**) मै अनुभव कर रहा हूँ । (**बाहर की खिड़की के पास आकर**) खिड़की बन्द कर मै बाहर की ओर से आँखे बन्द कर सकता हूँ पर बाहर की घटनायें नही बन्द कर सकता ।

गाथा : आपके अनुभव को मै अस्वीकार नहीं करती, फिर भी मुझे कुरूपता की कल्पना शांति देती रही है। मुझे ऐसा लगता रहा है कि सुन्दरता खोकर मैं सुख-शांति पा जाऊँगी । (**रुककर दबे स्वर में**) मुझे दुख तो उस सामाजिक कुंठा ने दिया है जिससे दूर होने की मैं कल्पना भी नहीं कर

सकती। अपनी उपेक्षा के भय से मैंने उसे छिपाने का भी यत्न किया है। (**अटकते हुए**) और जिनसे वह सत्य छिपाया है उनसे क्षमा माँगने का भी अब साहस नहीं मुझमें।

अरूप : वह सामाजिक सत्य, आप साहस से अपने साथ रखती तो शायद आपकी उलझनें इतनी न बढ़तीं। कितनी ही स्त्रियाँ मिलेंगी आपको जो न इसे दुर्बलता मानती हैं न इसे छिपाती हैं। (**स्वर ऊँचा करते हुए**) आपकी दुर्बलता का लाभ भूषण ने उठाया, और उसी दुर्बलता ने आपको समाज से खींच लिया। (**रुककर**) इसे रहस्य बनाये रखने में आपकी सारी शक्ति लग गई और आप हर दृष्टि से निर्बल हो गईं।

गाथा : अपनत्व में पली-बढ़ी थी इसलिए तिरस्कार की कल्पना से डर गई। (**रुककर**) उसके बाद भी किसी ने मुझे सुन्दरता से हटकर हृदय की गहराई तक नहीं देखा, और मेरा अभिशाप दिन पर दिन बढ़ता गया। (**भावुकता से**) धीरे-धीरे मुझे अपने आपसे—पास आनेवाले हर आदमी से—डर लगने लगा!

अरूप : (**घूमकर गाथा के पास आते हुए**) जितनों से आप डरी हैं उनमें से आदमी तो मुझे कोई नहीं लगता (**रुककर**) सब आदमी के टुकड़े हैं। आदमी तो डरने की नहीं, प्यार करने की वस्तु है।

गाथा : (**आश्चर्य से**) आदमी के टुकड़े।

अरूप : हाँ! आदमी के टुकड़े! लाला धरमदास, भूषण, माइकिल, मुंशी जी, मधु, आप और मैं ....सभी टुकड़े हैं। दुनिया ऐसे ही टुकड़ों से भरी है। पूरा आदमी है कहाँ.....? हममें से तो कोई नहीं है। (**गाथा की ओर देखकर**) आज की सामाजिक व्यवस्था ने, जीवन के संघर्षों और समस्याओं ने आज के आदमी को तोड़ दिया है। वह टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया है। (**गाथा अवाक् सुनती है, अरूप घूमकर अपनी टेबल का सहारा लेते हैं**) किसी टुकड़े में अच्छाई

अधिक है और बुराई कम । कुछ टुकड़े ऐसे भी हैं जिनमें बुराई अधिक है और अच्छाई नाम मात्र को । जिस टुकड़े में अच्छाई अधिक है वही हमें अच्छा लगता है।

गाथा : तो क्या संसार में कभी पूरा आदमी होगा ही नहीं।

अरूप : (सिर हिलाकर) होगा, अवश्य होगा। जिस दिन लौकिक धरातल पर हमारे मानववादी संस्कार इन टुकड़ों को मिला देंगे, जोड़ देंगे उस दिन हमें पूरा आदमी मिलेगा। (गर्व से) और वह आदमी प्रेम और श्रद्धा का पात्र होगा।

गाथा : (अरूप को निहारते हुए) पर....मुझे तो आज भी एक पूरा आदमी दिख रहा है।.....(ठककर) लौकिक धरातल पर मानववादी संस्कारों में ढला.....प्रेम और श्रद्धा का पात्र.... (सिर झुक जाता है)।

अरूप : (कुछ आश्चर्य से).... आपको ऐसा पूरा आदमी कहाँ दिख गया। (गाथा सिर उठाकर अरूप को देखती है और मुस्कान भरी लाज से सिर झुका लेती है) नहीं.... नहीं.... गाथा..... यदि तुम मुझे पूरा आदमी समझ रही हो तो भूल कर रही हो..... मैं भी उन्हीं टुकड़ों में से एक हूँ..... हाँ..... (नेपथ्य से आरती की घंटी सुनाई देती है और उसके बाद माधवी के स्वर में—म्हारो जनम मरण को साथी.! अरूप का ध्यान उस ओर खिंच जाता है। गाथा भी उसी ओर उन्मुख हो जाती है। कुछ क्षणों की तन्मयता के बाद) मधु आरती कर रही है। संध्या हो गई है न.....? अभी मुझे प्रसाद लेने बुलायेगी।

गाथा : (अचानक) हाँ, संध्या हो गई है। (ठककर) मैं भी प्रसाद लेना चाहती हूँ। मेरे लिए भी ले आइएगा।

अरूप : (तन्मयता से) देवता को प्रणाम कर प्रसाद लेने में ही

सुख मिलता है गाथा ! हमें अपना-अपना प्रसाद लेने चलना चाहिए । (रुककर भावुकता से) आज तक अकेला ही प्रसाद लेता रहा हूँ.....आज.....तुम्हारे साथ .....

[अचानक रुक जाते हैं ! गाथा देखती है और लजाकर खड़ी रह जाती है.....दरवाज़े पर चश्मा साफ करते मुस्कुराते मुंशी जी दिखलाई देते हैं । अरूप के चेहरे पर कुछ और कहने की इच्छा मचलने लगती है । नेपथ्य से भजन की पंक्तियों का स्वर ऊँचा होता है.....गाथा और अरूप मुग्ध भाव से एक दूसरे को देखते हैं । पर्दा गिरता है ।]

—०—